हिमालय के अञ्चल से

महामण्डलेश्वर स्वामी शिवानन्द सरस्वती

प्रथम अंगरेजी संस्करण का सरल हिन्दी अनुवाद

मूल्य २) रु०]
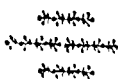
[डाक व्यय पृथक्

योग वेदान्त फारेस्ट एकैडेमी के लिए
श्री स्वामी कृष्णानन्द सरस्वती जी द्वारा प्रकाशित

प्रथम बार (अंगरेजी में) १९५३
हिन्दी का प्रथम संस्करण १९५४
हिन्दी का द्वितीय संस्करण १९६५

हिन्दी रूपान्तरकार :
श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द सरस्वती

मुद्रक :—
श्री नारायण प्रेस, ऋषिकेश, जि० देहरादून।

– समर्पण –

श्री १०८ सद्गुरुदेव

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

की पुण्य स्मृति में

उनके परम पावन दिव्य चरणों में

सादर सप्रेम समर्पित।

अभिनन्दन

यह हिमगिरि-गिरा धवल सुन्दर
हो हरित हिमालय-अञ्चल से
करने जग में पीयूष वर्षण
आ पड़ी गंग की लहरों पर।

शिव मस्तक से निःसृत होकर
निस्तब्ध शान्ति संसृत होकर
करने ज्योति अज्ञान गुहा
ले ज्योतिर्मय जीवन सुन्दर।

यह युग वाणी यह वेद गिरा
यह नभ-ध्वनि यह वेदान्त सार
करने गीता-सन्देश गान
आ पड़ी कृष्ण लकुटी महान्।

यह सोम सुधा यह आत्म विभा
अमरावति से अंगड़ाई ले
करने चिर जीवन का विहान
आ पड़ी ले यह आत्म ज्ञान।

प्रकाशक का वक्तव्य

पूर्व तथा पश्चिम के सभी जिज्ञासुओं के मन में आध्यात्मिक ज्ञान के साथ साथ हिमालय का नाम संयोजित है। पूरा वैदिक युग से लेकर आधुनिक युग तक प्रतिभाशाली संतों एवं दार्शनिकों की परम्परा द्वारा परम सत्य हिमालय की गुहाओं से निरन्तर प्रतिध्वनित होता रहा है। उस प्रतिध्वनि से गुञ्जरित हो हिमालय की श्रेणियाँ अज्ञाननिद्रा में पड़े सांसारिकों को अनादि काल से उद्‌बोधन-गान का सुमधुर संगीत सुनाती रही हैं।

श्री स्वामी शिवानन्द जी ने अपने व्यापक ईश्वरीय-कार्य-क्षेत्र के साथ साथ सर्वभौमिक सत्यों को उस रूप में प्रस्तुत किया है, जो समस्त संसार के लिए सुग्राह्य हो। उनके ईश्वरीय प्रदीप से महाज्ञान रूपी ज्योति किरणों को ही इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है, जिससे साधकों को आत्म-साक्षात्कार के पथ पर सतत प्रकाश मिलता रहे।

यहां पर श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द सरस्वती का उल्लेख करना उपयुक्त होगा, जिन्होंने इस पुस्तक का अनुवाद कर हिन्दी भाषाभाषी जनता के समक्ष इसे प्रस्तुत करने का स्तुत्य-प्रयास किया है।

प्रकाशक

अनुवादक के दो शब्द

एक ओर हिंसा और द्वेषाग्नि से अशान्त-मानव-मस्तिष्क में सहारा के संतप्त मरुस्थल से उठने वाले प्रबल झंझावात के ताण्डव नर्त्तन के द्वारा मानवी सभ्यता के स्रोत का निष्ठुर-शोषण हो रहा है, दूसरी ओर हिमालय के अञ्चल से इस संताप के निवारणार्थ प्रेम एवं करुणा की अविरल, निष्कल, निर्मल गङ्गा का पावन स्रोत बहाता हुआ ऊषाकालीन सुरभि-गर्भित, सुधा-समन्वित शीतल समीरों के द्वारा हिमशीतलता, हिमशान्ति, हिमधवलता, हिमोत्कृष्टतामय भारतीय संस्कृति का सन्देश सुनाया जा रहा है।

निश्चय ही यह पुस्तक वेद सी सुमान्य, रामायण सी सुपूज्य तथा गीता सी सुपठित होगी।

अनुवाद-काल में भावना की सजीवता तथा शैली की उत्कृष्टता को अक्षुण्ण बनाये रखना ही अनुवादक का प्रमुख लक्ष्य रहा है। इस अनुवाद में यत्र-तत्र परिमार्जन के द्वारा सजीवता, सचेतनता तथा प्रखरता लाने के लिए श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का चिर आभार।

'ज्योतिर्मय'

विषय सूची

प्रथम खण्ड : प्रथम परिच्छेद
आनन्द की ओर

प्रथम खण्ड : द्वितीय परिच्छेद
लौकिक-कर्तव्य

प्रथम खंड : तृतीय परिच्छेद
बाधाओं पर विजय

प्रथम खण्ड : चतुर्थ परिच्छेद
योग-मार्ग

द्वितीय खण्ड : प्रथम परिच्छेद

तुम्हारा परम लक्ष्य—ईश्वर

द्वितीय खंड : द्वितीय परिच्छेद

ज्ञान का उद्गम्—वेद

द्वितीय खंड : तृतीय परिच्छेद

योग का आधार

द्वितीय खंड : चतुर्थ परिच्छेद

संसार में तुम्हारा स्थान
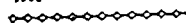
May Sadguru's Kripa be upon ... lways : (Chidananda)

Om Namo Bhagavate Sivanandaya !

Kumari VEENA
daughter of Shri Shiv Prakash Kapoor
and Smt: Rooprani.

The Blessed Couple.
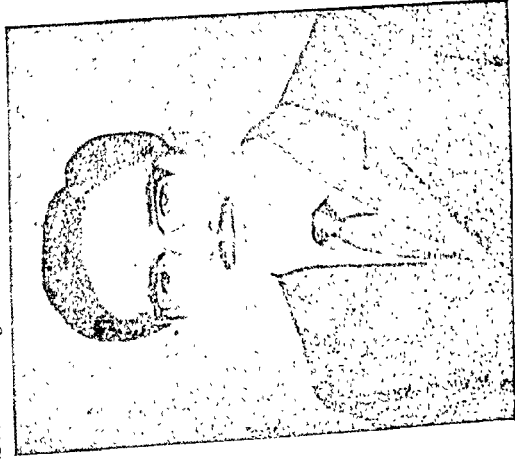
Shri Lalit Mohan
son of Shri Chaman Lal Seth
and Smt: Bimlavati.

OM

DIVINE PARTNERSHIP IN LIFE

A Special MESSAGE *form Sri Swami Chidananda, Rishikesh for the occasion of the auspicious Marriage of* **Shri Lalit Mohan Seth** *with* **Smt. Veena** *on 25th November, 1965.*

GLORIOUS IMMORTAL ATMAN !

Om Namo Narayanaya. Jai Gurudev Sivananda !

It is a great joy to send you this message in the holy name of Gurudev upon the happy occasion of the sacred marriage ceremony of our beloved young **Lalit Mohan** and **Sri Veena Devi.** May the Divine Grace of the Lord be upon them both always and may the choicest spiritual Blessings of Swami Sivanandaji also descend upon them and fill their life with blessedness and highest happiness, prosperity and progress.

Marriage is really a glorious sacrament or "Sanskar" of the Hindu people by which two souls are united together in a Divine Partnership in life to fulfil Dharma, do paropakara and to

worship GOD and attain the highest spiritual Happiness thereby. This sacrament elevates the Brahmachari to the second great ashrama of the Grihastha where he can shine as an Ideal man and citizen and help all the other ashramas and serve society in diverse ways with the cooperation and help of his dutiful wife. The home of such an Ideal Grihastha who fulfils Dharma, worships God and serves man is not a secular home but it is real Vaikuntha or heaven itself. God is immensely pleased with such a couple who stick to Dharma, lead a pure life and serve others with practical Goodness. Let Lalit Mohan and Veena both develop such a home and live such a life.

The house-holder who lives such a pure and virtuous life becomes a glorious inspiration and a blessings to the community as well as the entire society at large. The life of an ideal Dharmic couple is like a bright light in the darkness of Kaliyuga. Let them realise that Grihasthashram is a great opportunity to evolve a noble life and to grow in virtue and service. It is not either for special enjoyment or for material gain only. It is a field for cultivation of sublime beautiful qualities and the growth of truth, purity, selfless service and devotion. Such is the importance of married life and Grihastashram.

Let them both lead a simple life. Fashion and extravegance must be avoided. Fashion is an enemy of peace and happiness. The husband and wife must manifest the true spirit of Indian culture.

Let Veena grow into a great **Pativrata nari** like Devi Sita and Anusooya. Let Lalit adopt the great vow of **Ekapatni vrata** shown by Bhagavan Sri Rama, our Marayada Purushottama. Let them shine with purity and virtue. Let them both love each other with devotion and deep faithfulness. Sacred is marriage. Sacred is the home. Let the wife serve her Lord. Let him honour her. Let both honour and serve their elders, guests, learned people, holy men and saints. Let them help the poor and the needy according to Dharma.

Their home must be like a sanctified temple of God. It must ring with the joyful chant of God's Divine Name. Sacred scriptures must be heard in their home. God should be daily worshipped without fail. The purifying fragrance of insence and Arathi shall make the home a sacred abode verily. Such a life and such a home will bring prosperity, progress, success and happiness to the married couple.

Have faith in God. Do your duty correctly. Remember God always. Walk the way of truth and goodness. Know that both of you are always in the presence of God. God dwells within you. To live is to move towards God daily. May God bless you. May the Grace of Sadgurudev Sivanandaji be upon both **Lalit Mohan** and **Veena** as also upon their parents and all the relatives too. May God shower divine benedictions upon this auspicious marriage occasion.

Om Namah Shivaya. Jai Sivananda.

Yours in Gurudev,

Swami Chidananda.

Shivanandashram,
25th November, 1965.

॥ ॐ ॥

जीवन में दिव्य सहभागिता

दिनांक २५ नवम्बर ६५ को *श्री ललित मोहन सेठ* तथा *कुमारी वीणा* के शुभ विवाह के अवसर पर श्री स्वामी चिदानन्द जी, ऋषिकेश द्वारा प्रेषित विशेष सन्देश।

भाग्यशाली अमर आत्मन्!

ओश्म् नमो नारायणाय। जय गुरुदेव शिवानन्द।

पूज्य गुरुदेव के पवित्र नाम में अपने प्रिय नवयुवक *ललितमोहन* तथा *कुमारी वीणादेवी* के पावन विवाह-संस्कार के सुमङ्गल प्रसङ्ग पर यह सन्देश भेजते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है। जगन्नियन्ता भगवान् की अलौकिक कृपा उन पर सदा-सर्वदा बनी रहे और श्री स्वामी शिवानन्द जी का आध्यात्मिक आशीर्वाद उन पर अवरित हो और उनके जीवन को सौभाग्य, परम-सुख, समृद्धि तथा अभ्युदय से आप्लावित करे।

हिन्दू विवाह वस्तुतः एक धार्मिक संस्कार है। इसमें धर्म के अनुष्ठान में, परोपकार के सम्पादन में तथा भगवत् आराधन और उसके द्वारा परमोत्कृष्ट सुख की प्राप्ति में आजीवन सहभागी बनने के लिए दो आत्माओं का दिव्य मिलन होता है। इस संस्कार में दीक्षित होकर ब्रह्मचारी उन्नततर जीवन के द्वितीय चरण—गार्हस्थ्य आश्रम में प्रवेश करता है जहां वह एक आदर्श व्यक्ति और नागरिक के रूप में अपनी प्रतिभा का परिचय दे सकता है तथा अपनी कर्तव्यपरायणा पत्नी के सहयोग और सहायता से अन्य सभी आश्रमों की सहायता और समाज की

नाना विध सेवा कर सकता है। जो धर्म का आचरण करता है, भगवान् की आराधना करता है और मानव जाति की सेवा करता है ऐसे आदर्श गृहस्थ का घर सामान्य घर नहीं, अपितु साक्षात् वैकुण्ठ है। जो धर्म-निष्ठ हैं, सदाचारमय जीवन यापन करते हैं और व्यवहार में परोपकारी हैं, भगवान् उनसे अतीव प्रसन्न रहते हैं। ललित मोहन और वीणा देवी भी ऐसे ही गृह का निर्माण करें और ऐसा ही जीवन यापन करें।

पूर्वोक्त रीति से पवित्र और धार्मिक जीवन व्यतीत करने वाले सद्गृहस्थ का जीवन उसकी जाति के लिए और सामान्य रूप से सारे समाज के लिए एक भव्य प्रेरणा-स्रोत तथा भगवान् की एक अमूल्य देन बन जाता है। इस कलिकाल के निविड़-अन्धकार में एक आदर्श धार्मिक दम्पती का जीवन प्रज्वल दीप के समान है। उन्हें (श्री ललित मोहन तथा वीणा देवी को) विदित हो कि गृहस्थाश्रम सुन्दर जीवन के विकास का, धर्म तथा सेवा के प्रकटीकरण का एक महान् अवसर है। यह न तो किसी भोग-वासना की तृप्ति के लिए है और न किसी भौतिक लाभ के लिए ही। यह तो भव्य सद्गुणों के विकास का क्षेत्र है—सत्यता, शुचिता, निःस्वार्थ सेवा तथा भक्ति को उन्नत बनाने का क्षेत्र है। विवाहित जीवन और गार्हस्थ्य आश्रम की ऐसी ही महिमा है।

पति-पत्नी दोनों ही सरल जीवन यापन करें। फैशन और फिजूलखर्ची (अपव्यय) से बचते रहें। फैशन सुख और शान्ति का शत्रु है। नवदम्पत्ति अपने जीवन में भारतीय संस्कृति की सच्ची भावना अभिव्यक्त करें। वीणा देवी, सीता और

अनसुय्या के समान ही महान् पतिव्रता नारी बनें। ललितमोहन मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् राम द्वारा प्रस्तुत एक पत्नीव्रतके आदर्श को अपनायें। गम्भीर निष्ठा और विश्वास पूर्वक दोनों में परस्पर प्रेम हो। विवाह पवित्र है। घर पवित्र है। पत्नी अपने पति की सेवा करे, पति अपनी पत्नी को सन्मान दे और पति तथा पत्नी दोनों मिल कर अपने गुरुजनों, अतिथियों, विद्वानों तथा सन्त-महात्माओं की सेवा और सन्मान करें। दोनों ही धर्म के अनुसार निर्धनों और अभावग्रस्तों की सहायता करें।

उनका घर भगवान् का पवित्र मन्दिर बने। उसमें भगवान के दिव्य नाम की आनन्ददायी ध्वनि गूँजती रहे। भगवान् की पूजा नित्य अविराम गति से चलती रहे। धूप और आरती की पवित्र सुगन्धि से उनका घर निश्चय ही दिव्य धाम बन जायेगा। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसा घर और ऐसा जीवन नवदम्पति के लिए सुख, समृद्धि, अभ्युदय और सफलता का आवाहक होगा। भगवान् में श्रद्धा रखिए। अपने कर्तव्य का यथावत् पालन कीजिए। सदा भगवद्चिन्तन कीजिए। सचाई और धर्म के मार्ग पर चलिए। ध्यान रहे कि आप दोनों सदा ही भगवान् के सान्निध्य में हैं। भगवान् आपके हृदय में निवास करते हैं। जीने का अर्थ है भगवान् की ओर नित्य एक पग आगे बढ़ना। आपको भगवान् का आशीर्वाद प्राप्त हो। ललित मोहन तथा उनके माता-पिता और सभी बन्धु-बान्धवों पर सद्गुरुदेव शिवानन्द जी की कृपा बनी रहे। इस शुभ विवाह के मंगल अवसर पर भगवान् अपनी कृपा-दृष्टि करें।

शिवानन्दाश्रम — *गुरुदेव के चरणों में अपना ही*

२५ नवम्बर, १९६५ — स्वामी चिदानन्द

❀ ॐ ❀

विश्व-प्रार्थना

हे स्नेह और करुणा के आराध्य देव!

तुम्हें नमस्कार है नमस्कार है!!

तुम सच्चिदानन्दघन हो।

तुम सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ हो,

तुम सबके अन्तर्वासी हो।

हमें उदारता, समदर्शिता और मन का समत्व प्रदान करो,

श्रद्धा, भक्ति और प्रज्ञा से कृतार्थ करो,

हमें आध्यात्मिक अन्तः शक्ति का वर दो।

जिससे हम वासनाओं का दमन कर मनोजय को प्राप्त हों।

हम अहङ्कार, काम, लोभ और द्वेष से रहित हों।

हमारा हृदय दिव्य गुणों से पूर्ण करो।

सब नाम-रूपों में तुम्हारा दर्शन करें।

तुम्हारी अर्चना के ही रूप में इन नाम-रूपों की सेवा करें।

सदा तुम्हारा ही स्मरण करें,

तुम्हारी महिमा का गायन करें।

केवल तुम्हारा ही कलिकल्मषहारी नाम हमारे अधर पुट पर हो,

सदा हम तुम में ही निवास करें!

हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

ॐ श्री सद्गुरु परमात्मने नमः

हिमालय के अंचल से

प्रथम खण्ड : प्रथम परिच्छेद

आनन्द की ओर

(क) ओ साधक ! ध्यान दो।

(ख) उत्तिष्ठत जाग्रत।

(ग) वैराग्य बढ़ाओ, साधना करो।

(घ) इन्द्रियों से सावधान !

(ङ) निष्काम बनो।

—:❀००❀:—

(क) ओ साधक ! ध्यान दो

१. यह संसार स्वत्वरहित है। यह कदली-स्तम्भ की नाईं नीरस है। समाधि प्राप्त करने पर यह लुप्त हो जायगा।

२. सांसारिक जीवन अपूर्ण, शान्त तथा सीमित है। यह दौर्बल्य, कष्ट, क्लेश तथा व्याधियों से ओत-प्रोत है।

३. आज से ही दिव्य-पथ पर अपनी यात्रा का श्रीगणेश करो। तुम्हारे सारे दुःखों का सद्यः अंत होगा।

४. जीवन का वास्तविक मूल्यांकन करो। यह पूर्ण नहीं है। यह सम्पन्न नहीं है। सतत अभाव की भावना इसमें जाग्रत रहती है।

५. यह संसार--जिसमें मित्र, शत्रु तथा सभी रहते हैं, जिनसे तुम्हें सुख-दुःख की अनुभूति होती है—तुम्हारे मन की सृष्टि-मात्र ही है।

६. सांसारिक पदार्थ नशे का काम करते हैं। धन अफीम है। स्त्री के लिए पुरुष और पुरुष के लिए स्त्री सुरा है। सांसारिक पद गांजा है। अधिकार ब्रांडी है। भूमि-अधिकार शैम्पेन के समान मादक है।

७. बाहरी पदार्थों के आकर्षण-जाल में न फँसो। यह भ्रम है।

८. यह संसार दहकते कोयलों का खड्ड है, अश्रुओं की घाटी है। यहाँ तुम नित्य-सुख की कामना नहीं कर सकते।

९. मनुष्य सांसारिक पदार्थ-रूपी खिलौनों में ही व्यस्त रहता है। अन्तर्मुखी होकर आत्मा के अनन्त सुख का उपभोग करने से उसे सुध ही नहीं।

१०. साधारण सांसारिक मनुष्य अपनी भावुकता में ही सीमित रहता है। वह अपने मन के निम्न स्तर में ही रहता है। उसे आत्मानुभूति की कोई कल्पना ही नहीं।

११. सांसारिक व्यक्ति का मन उद्भ्रान्त बना रहता है। वह अहंता में उन्मत्त रहता है।

१२. व्यर्थ हैं सांसारिक जनों के ये व्यवहार। पोले घमंड के ऊपर ही समाज अधिष्ठित है।

१३. संसार में तू ऐसा ही रह जैसे एक पथ का पथिक अथवा जल में कमल।

१४. मार्ग लंबा है। सखे, निराश न हो। निर्भयता-पूर्वक चलते जाओ। धीर बनो। सफलता निश्चित है। तुम निश्चय ही लक्ष्य तक पहुँचोगे।

१५. यह संसार एक सराय है। अपने घर की ओर अपनी यात्रा का प्रारंभ करो। तुम्हारा वास्तविक घर तो ब्रह्म का अमर लोक ही है।

१६. तुम धन लेकर क्या करोगे ? सम्बन्धियों से तुम्हारा क्या मतलब ? तुम्हारी पत्नी भी तुम्हारा साथ नहीं देगी। सभी निश्चय ही काल-कवलित होंगे। अपनी हृदय की गुहा में छिपे हुए उस अमर आत्मा को खोजो।

१७. हे अमृत पुत्र ! हे आत्मस्वरूप ! शक्ति का गाना गाओ ! निर्भयतापूर्वक आगे बढ़ते जाओ और ज्योतिर्मय लक्ष्य की प्राप्ति करो।

१८. ऐ यात्री ! ऐ पथिक ! सत्य के पथ पर अग्रसर होओ। ध्यान लगाओ ! प्रभु की वाणी सुनो। मौन में प्रविष्ट हो जाओ।

(ख) उत्तिष्ठत जाग्रत

१९. ऐ राम ! उत्कृष्ट वैराग्य का विकास करो। इसी में तुम्हारी मुक्ति है।

२०. हृदय को उज्ज्वल करो ऐ मनुष्य ! तुम इसी समय सु: की प्राप्ति करोगे। मानवता के हित-मित्र बनो। ज्योतिर्म योगी बनो परिश्रम करो। प्रयत्न करो।

२१. अपने को यहाँ परदेशी समझो। एक निश्चित उद्देश्य-आत्म-साक्षात्कार के लिए ही तुम यहाँ आये हो।

२२. ईश्वरत्व को पुनः प्राप्त करो। यह अवसर खोने का नहीं मृत्यु तीव्र गति से तुम्हारा पीछा कर रही है।

२३. क्या सांसारिक दलदल में ही फंसे रहोगे ? अपनी संकीर्णताओं को दूर करो। योगी बनो। आत्म-शक्ति के द्वारा दमन करो।

२४. अमर तथा सर्वानन्दमय आत्मा को अपने भीतर ही खोजो। तुम अनंत सुख तथा परम शांति का अनुभव करोगे।

२५. उन सारी वस्तुओं का त्याग करो, जो द्वैत की जनयित्री हैं।

२६ जन्म ही मृत्यु का कारण है।

२७. सुख ही दुःख का कारण है।

२८. प्रारंभ तथा अंत दोनों ही स्वप्न हैं। आत्मा अनादि तथा अनंत है।

२९. मनुष्य, ईश्वर, ब्रह्म तथा विश्व ये दर्शन के विषय हैं। दर्शन ज्ञान-के-प्रति-प्रेम का द्योतक है।

३०. यदि तुम हो तो ईश्वर भी है।

३१. केवल लक्ष्य ही नहीं, वरन् तुम्हारे कार्य्य, शब्द एवं विचार सभी ईश्वरत्व द्वारा ही निरूपित होते हैं।

३२. शांति कहाँ है ? यह निष्काम मनुष्य के हृदय में है। जिसने अपनी इन्द्रियों एवं मन का दमन किया है।

३३. तुम दूसरों को तभी उन्नत कर सकोगे जब तुमने स्वयं को उन्नत कर लिया हो।

३४. वे ही इस विश्व की रक्षा कर सकते हैं जिन्होंने अपने को रक्षित कर लिया है।

३५. एक बन्दी अन्य बन्दियों को मुक्त नहीं कर सकता।

३६. अनंत का भेद न करो, तभी तुम्हारे क्लेशों का अंत होगा।

३७. उपनिषदों के महासागर में गहरा गोता लगाकर परम मूल्यवान आत्म-मुक्ता को निकाल लाओ।

३८. ज्ञानार्जन करो और औपनिषदिक जीवन यापन करो।

३९. ब्रह्म अथवा परम सत्य सदैव स्वतंत्र है: इसे जानों और चिर स्वतत्र हो जाओ! स्वतंत्र हो जाओ!! स्वतंत्र हो जाओ!!!

४०. आओ, आओ! योगाभ्यास करो। अच्छी तरह ध्यान लगाओ। तुम अज्ञान तथा तम के सागर का अतिक्रमण करोगे और एवं चिर जीवन की प्राप्ति भी।

४१. आओ! योगाभ्यास के पाठों को सीखो। ध्यान लगाओ। आवरण विच्छिन्न करो। जाओ, शान्ति में निमग्न हो जाओ!

४२. मनुष्य-जन्म से पूर्ण लाभ उठाओ। वास्तविक अन्तरंग साधनामय जीवन धारण करो। ईश्वरीय कृपा तुम्हारे आध्यात्मिक पथ को प्रकाशित करे। ईश्वरीय-शक्ति तुम्हें महत् कार्य्यों को करने में समर्थ बनावे। भगवद्-कृपा तुम्हें ईश्वरत्व में परिणित कर दे।

(ग) वैराग्य बढ़ाओ, साधना करो।

४३. वैराग्य के बिना कोई भी धर्म नहीं टिक सकता।

४४. चिरंतन के प्रति प्रेम-जनित निष्काम-भावना को वैराग्य कहते हैं।

४५ वैराग्य के बिना आध्यात्मिकता नहीं हो सकती।

४६. संन्यास के बिना ब्रह्मसाक्षात्कार असंभव है।

४७ निष्काम भावना पवित्रता की पराकाष्ठा है।

४८. निष्काम भावना से अमरत्व एवं चिरन्तन शांति की प्राप्ति होती है।

४६. वैराग्य अथवा निष्कामभावना ईश्वरीय-प्रसाद का रंग महल है।

५०. माया तथा विषय-सुखोपभोगों की कामना का विनाश ही आध्यात्मिकता का मूल-मंत्र है।

५१. यदि तुम पाशविक-सुख की पिपासा से मुक्त हो तो तुमने प्राय: सारे शत्रुओं को परास्त कर दिया है।

५२ जिस समय तुम सारे बाहरी पदार्थों से संबंध-विच्छेद करोगे, उस समय तुम्हारे मन में शांति का प्रादुर्भाव होगा।

५३. वास्तविक वैराग्य के उदय होते ही संन्यास ले लो।

५४. योग को ही एकमात्र उद्देश्य, लक्ष्य तथा जीवन का वास्तविक मनोरंजन बनाओ।

५५. साधना में निमग्न हो जाओ और ईश्वर का साक्षात्कार करो।

५६. मूर्ख मनुष्यों की संगति करने की अपेक्षा साधना श्रेष्ठतर है।

५७. आध्यात्मिक अनुभवों की चिन्ता न करो। साधना में प्रगति करते जाओ। ज्ञान का प्रादुर्भाव स्वयं ही होगा।

५८. अनवरत साधना में संलग्न रहो। साधना ही तुम्हारा परम मित्र है।

५६. भोजन करना, पानी पीना तथा श्वास लेने के समान ही साधना भी तुम्हारे जीवन का एक अंग होना चाहिये।

६०. दृढ़ संकल्प करो। सच्चे बनो। सतर्क बनो। प्रगतिशील बनो। वीर सैनिको, आगे बढ़ते जाओ।

६१. दृढ़ संकल्प, अटूट विश्वास, ज्वलंत वैराग्य तथा मुमुक्षुत्व के गुणों का विकास करो। तुम शीघ्र ही सत्य की प्राप्ति करोगे।

६२. करो या मरो।

६३. साधनाकाल में प्राप्त होने वाले साक्षात्कारों, दृश्यों तथा अन्य अनुभवों को गुरु के अतिरिक्त किसी से भी न कहो।

६४. उठो ऐ साधक! तीव्र साधना करो। सारे मलों को जला डालो। ध्यान द्वारा ज्ञानालोक की प्राप्ति करो।

६५. क्षणिक भोगों की बिसात ही क्या? अपनी आत्मा में ही उस परमानन्द की खोज करो।

६६. पाशविक उपभोगों से ओत-प्रोत इन्द्रिय-परायणता का जीवन कितना खोखला है? अत विषय-सुखों का त्याग करो।

६७. कामिनी, कंचन और कीर्ति इन तीनों को त्याग दो। यह संसार तुम्हें आकर्षित नहीं कर सकेगा।

६८. इस संसार रूपी वृक्ष को काटने के लिये अनासक्ति एवं वैराग्य के खड्ग को धारण करो।

६९. पूर्ण त्याग एवं विरक्त जीवन से बढ़कर कोई महिमा नहीं, कोई आनन्द नहीं। यह महत् जीवन है।

७० संन्यास ही तुम्हें निर्भय तथा सुखी बना सकता

(घ) इन्द्रियों से सावधान

७१. विषय-सुखों के लिये लालायित न होवो। केवल भूमा में ही आनन्द है, इसे जानो। सांसारिक अल्पायु वस्तुओं में सुख लेश-मात्र नहीं।

७२. मन को वैषयिक पदार्थों की ओर मत भटकने दो। यही निरोध या आत्म-नियंत्रण है।

७३. जिसमें विवेक नहीं, वह शिशुवत् है। वाह्य आनन्दों के पीछे पढ़ कर मृत्यु-पाश में निमग्न हो जाता है।

७४. अन्तर्दर्शी बनो। इन्द्रियों से संसर्ग स्थापित करना बन्द करो। विवेकी बनो। बुद्धिमान बनो।

७५. बुद्धि ही चिरस्थाई एवं क्षणिकता के भेद को सुव्यक्त करती है।

७६. सत्यासत्य-विवेक का अर्जन करो। तभी तुम विषयानन्दों के पोलेपन से अवगत होगे।

७७. यह अनुभव करना सीखो कि विषयानन्द कदापि पूर्ण एवं सम्पन्न नहीं है।

७८. विषयानन्दों के अत्यधिक उपभोग से सम्भूत हुई विपत्तियों से शिक्षा ग्रहण करो।

७९. शस्त्र एवं सम्पत्ति के बल उछलने का प्रयास न करो। ज्ञान एवं विवेक से उत्पन्न हुई अविचल शक्ति का अवलम्बन ही वास्तविक बल है।

८०. सांसारिक उपभोगों से अपना मुँह मोड़ लो। तभी तुम ईश्वर को प्राप्त करोगे।

यदि मौत का आलिंगन तुम्हें पसन्द नहीं, तो इन्द्रिय-परायण जीवन का त्याग करो।

अमर आत्मा का ध्यान करो। विषय-सम्बन्धी सारे विचार स्वतः नष्ट हो जाएँगे।

(ङ) निष्काम बनो

कामना ही दरिद्रता है।

कामना ही मन की सबसे बड़ी अशुद्धि है।

कामना ही कार्य्य की प्रवर्त्तिका शक्ति है।

मनोकामना ही वास्तविक मल है।

कामना की एक छोटी चिनगारी भी महान विनाश का द्योतक है।

कामना का अधिपत्य उसी व्यसनी मनुष्य पर होता है जिसका हृदय राजसिकता से परिपूर्ण है। वह अपूर्ण एवं दुर्बल हो जाता है। वह बन्धन ग्रस्त हो जाता है। वह सीमित हो जाता है। वह अज्ञानी है।

. तुम्हारी कामनाएँ कदापि संतृप्त नहीं होने की। तुम ब्रह्मांड-मण्डल के ऐश्वर्य्य के भी अधिकारी क्यों न हो जाओ।

. जीवन अल्प है। समय गतिशील है कामना अनियंत्रित है। शान्ति-विरोध, इस कामना को कत्ल कर डालो।

. कामना तथा तृष्णा का त्याग करो। ईश-कृपा की आराधना करो। वैराग्य तथा संन्यास रूपी वीणा के तारों पर उसके नाम का गायन करो।

९२. विचार, वैराग्य, मुमुक्षुत्व तथा ध्यान के द्वारा सारी कामनाओं को निष्ठुरता के साथ विनष्ट कर डालो।

९३. कामना-त्याग ही मोक्ष अथवा अभिष्ट मुक्ति है।

९४. कामना ही मन को मलयुक्त बनाती है। सारी कामनाओं का नाश करो। शीघ्र ही मन निर्मल हो जायगा।

९५. केवल ईश्वर ही तुम्हें कामनाओं एवं भयों से मुक्त कर सकता है। सत्य एवं साहस की प्राप्ति के लिए उसकी प्रार्थना करो।

९६. निष्काम एवं निर्भयस्वरूप ब्रह्म का ध्यान करो। तुम भी निष्काम और निर्भय हो जाओगे।

९७. किसी वस्तु के लिए लालायित न होओ। वह तुम्हें नहीं मिलेगी। तृष्णा का त्याग करो। वह स्वतः तुम्हारा अनुगमन करेगी।

९८. किसी चीज की कामना न करो। सारी कामनाओं का त्याग करो और सुखी हो जाओ।

९९. संतुष्ट मनुष्य के लिए अखिल विश्व का प्रभुत्व भी तृणवत् ही है। असन्तुष्ट ही वास्तव में विपत्तिग्रस्त तथा दरिद्र है।

१००. ओम् का जप करो। ओम् की तान छेड़ो। ओम् का गायन करो। ओम् का ध्यान करो। सारी कामनाएँ लुप्त हो जाएँगी। तुम आत्म-साक्षात्कार करोगे।

लौकिक-कर्तव्य

प्रथम खण्ड : द्वितीय परिच्छेद

लौकिक-कर्तव्य

———❋:o:❋———

(क) जीवन की परख ।

(ख) दिव्य-जीवन-यापन ।

(ग) युवक-संरक्षण ।

(घ) सत्संगति ।
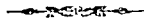
(क) जीवन की परख

१. जीवन क्या है : एक नाटक है । इसमें अच्छी तरह अपना अभिनय करो ।

२. यदि तुम अच्छे होगे तो तुम्हारे लिए सारी दुनियां अच्छी होगी ।

३. इस संसार की सत्ता इसीलिए है, क्योंकि मन का कार्य द्वैतात्मकता पर अवलम्बित है ।

४. कोई भी वस्तु न तो अच्छी है, न बुरी, विचार ही उसे स्वभावानुसार वैसा बना डालता है ।

५. अन्न, जल तथा अग्नि से भी अधिक मनुष्य को सहानुभूति, दयालुता तथा बन्धुत्व की आवश्यकता रहती है ।

६. भावना के सहारे ही तुम सुख-दुःख का अनुभव करते हो ।

७ निम्न प्रकृति पर विजय तथा दौर्बल्य-दमन ही आनंद प्राप्ति का पथ है ।

८. इन्द्रियों का संग्राम अति भयावह है। साहस पूर्वक युद्ध करो। तुम उन्हें अवश्य जीतोगे।

९. शारीरिक आकर्षण तुम्हारा दुर्दम्य शत्रु है। सतत ध्यान के द्वारा आत्मा में अधिष्ठित हो जाओ और इस शत्रु का विनाश करो।

१०. आत्म-निरीक्षण करो। मन पर दृष्टि-निक्षेप करो। यह शनैः शनैः शांत हो जायगा और तुम अपने अवगुणों को हटाने में समर्थ हो सकोगे।

११. दिव्य-जीवन परिपूर्ण, अनन्त, सम्पन्न तथा आनन्दमय है। अतः दिव्य जीवनयापन करो।

१२. सुचारुरूपेण विचार करो। सावधानी के साथ निश्चय करो। परिश्रम के साथ कार्य करो।

१३. ऐ मनुष्य! स्वतः शुद्ध बनो—ऊँचे उठो। बुद्धिमान् बनो। अपने को जानो और स्वतंत्र हो जाओ।

१४. जिस समय तुम अपना मन ईश्वर की ओर ले जाओगे, उसी क्षण तुम अत्यन्त शक्ति तथा शांति को प्राप्त करोगे।

१५. सभी प्राणियों की शुभकामना करो। इससे तुम्हारा जीवन सम्पन्न होगा। तुम प्रसन्न तथा शांतिमय हो सकोगे।

१६. उठो! जागो! आत्मज्ञान प्राप्त करो और मुक्त हो जाओ।

१७. इस मर्त्यलोक के श्रमिक पथिकों को धर्म ही शांति प्रदान करता है। यह उन्हें जीवन-रहस्य समझाता है। यह अमरधाम के पथ का प्रदर्शन करता है।

१८. ईश्वरान्तर्गत जीवनयापन ही धर्म है। ईश्वर विषयक विवादमात्र ही धर्म नहीं।

१९. परोपकार, प्रेमार्जन, दया, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सदाचरण एवं सच्चाई का पालन ही धर्म का अर्थ है।

२०. ऐ राम! स्वतंत्रता तेरा लक्ष्य है। तेरा लक्ष्य यही है। इसमें अनन्त शक्ति है। अतिक्रमण कर! गम्भीर शांति में प्रविष्ट हो जा!

(ख) दिव्य-जीवन-यापन

२१. सत्य, प्रेम तथा सात्विकतामय दिव्य जीवन यापन करो।

२२. मानव-सेवा के लिए ही जीवनधारण करो।

२३. सात्विक बनो। सत्कार्य करो। यही दिव्य जीवन है।

२४. अच्छा बनो। सुकर्म करो। सेवा करो, प्रेम करो, दान दो, शुद्ध बनो, ध्यान करो और फिर साक्षात्कार करो—यही 'शिव' का धर्म है। यही दिव्य-जीवन-मंडल के सदस्यों का धर्म है।

२५. शरीर, इन्द्रिय तथा मन को अनुशासित करो।

२६. अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य के त्रयसिद्धान्त का पालन करो।

२७. अपने पड़ोसियों एवं संगियों के साथ शान्ति एवं समत्व-मय जीवन-यापन करो।

२८. किसी के प्रति शत्रुता न रखो। दूसरों को परेशान न करो, न दूसरों से परेशान होओ।

२९. भूल जाओ और क्षमा कर दो। तुम शान्ति पाओगे। तुम दिव्य हो जाओगे।

३०. यदि कोई मनुष्य तुम्हारा अविश्वासी निकले तो उसके प्रति तुम विश्वासी बने रहो।

३१. अतीत को भूल जाओ। नवीन जीवन का पुनरारंभ कर तुम दिव्य बन जाओगे।

३२. यौवन मन की एक स्थिति है। समय तथा उम्र से इस कोई सम्बन्ध नहीं।

३३. सभी सुअवसरों का सदुपयोग करो। तुम अपने जीव को स्वर्गिक बना डालोगे।

३४ प्रयास करो और संलग्न रहो। प्रत्येक कार्यों में तुम सफलता प्राप्त करोगे।

३५. प्रेम, ज्ञान तथा ज्योतिर्मय जीवन ही दिव्य जीवन है।

३६. तुम्हारा प्रेम व्यापक हो। सबों में एक रस हो जाओ। सबों में एकरसता का भान करो।

३७ प्रेम, नम्रता, क्षमा, धैर्य, करुणा, साहस, आर्जव, अहिंसा, सात्विकता, मुमुक्षत्वादि गुण देवत्व की ओर प्रवृत्त करते हैं।

३८. सभी प्राणियों में देवत्वदर्शन करो।

३९. सबों को ईश्वर समझ नमस्कार करो। सर्वत्र उसी की स्थिति का भान करो।

४०. यथासंभव दूसरों के साथ साथ अपने को भी उन्नत, बुद्धिमान् तथा सुखी बनाने का प्रयत्न करो।

४१. अहंकार, निम्नात्मा तथा सीमित सांसारिक जीवन के साथ संग स्थापित न करो। अनन्तानन्द के उच्चतम साम्राज्य में विचरण करो।

४२. सङ्ग ही मृत्यु है। असंग ही चिरंतन जीवन है।

४३. सङ्गत्याग से शान्ति तथा अमरत्व की प्राप्ति होती है।

४४ विद्वत्ताभिमान, शिक्षाभिमान, तथा उपाधियों का परित्याग कर शिशुवत् मूक हो जाओ। अब तुम अवश्य ही आत्म-साक्षात्कार करोगे।

४५. अपने सारे कार्यों को आध्यात्मिकता में परिणत कर दो।

४६ तुम्हारे नेत्र दयामयी दृष्टि का निक्षेपण करें। तुम्हारी जिह्वा मधुर-भाषी हो तथा तुम्हारे हाथों का स्पर्श सुकोमल हो।

४७. तेरे नेत्र भगवन्मूर्ति के सिवा अन्य किसी को न देखें। तेरे श्रोत्र उसी की प्रशंसा से परिपूर्ण हों। तेरा मन उसी के पाद-पद्म में रमा रहे।

४८. तू बुद्ध की तरह करुणामय, भीष्म की तरह सात्विक, हरिश्चन्द्र की तरह सत्यनिष्ठ तथा भीम की तरह बहादुर बन।

४९. सदैव परोपकारनिरत रहो। निःस्वार्थ बनो। प्रत्येक वस्तु का मानसिक परित्याग करो और मुक्त हो जाओ। यही दिव्य जीवन है। यही मोक्ष अथवा मुक्ति का सरल मार्ग है।

५० तुम्हारा जीवन सत्य, प्रेम, उत्सर्ग तथा निष्काम सेवा का ज्योतिर्मय प्रतीक हो।

५१. निस्सीम में निवास करो।

५२. ईमानदार बनो। सच्चे बनो। सत्यनिष्ठ बनो। सावधान रहो। सतर्क रहो। परिश्रमी बनो। वीर बनो। चरित्रवान् बनो। तुम्हें सफलता तथा महिमा की प्राप्ति होगी।

५३. यदि तुम अपने दैनिक जीवन में सत्यनिष्ठ तथा सात्विव हो तो तुम्हें ईश्वरीय साम्राज्य का उत्तराधिकार मिलेगा।

५४. अपने जीवन को ईश-संस्मरण से ओत-प्रोत कर डालो। अपने सर्वस्व को उस भगवान पर न्योछावर कर दो। सबों में उसी को देखो।

५५. "अच्छा बनो। सुकर्म करो। सेवा करो, प्रेम करो, दान दो, शुद्ध बनो, ध्यान धरो और साक्षात्कार करो।"

५६. जप करो। कीर्तन करो। दान दो। ध्यान धरो। आत्मानन्द की प्राप्ति करो। तुम्हें ईश-कृपा प्राप्त हो।

५७. उदार बनो। करुणानिधान बनो। ईमानदार बनो। सच्चे बनो। सत्यनिष्ठ बनो। वीर बनो। शुद्ध बनो। बुद्धिवान् बनो। गुणवान् बनो। "मैं कौन हूँ" की जिज्ञासा करो। आत्म-ज्ञान प्राप्त करो और मुक्त हो जाओ। यही शिव के उपदेशों का सारांश है।

५८. सभी ईश्वर के प्रतिरूप हैं। किसी के प्रति भी मनोमालिन्यता का होना अत्यन्त लज्जाजनक है।

५९. कुबुद्धि, द्वेषी तथा स्वार्थी जनों से घृणा न करो। ये ही तुम्हारी मुक्ति के प्रवर्त्तक हैं।

६०. प्रत्येक धर्मावलम्बी साधु का आदर करो।

६१. मौखिक सेवा, मौखिक सहानुभूति तथा मौखिक वेदान्त का त्याग करो।

६२. सिद्धान्त दूसरी वस्तु है और जीवन दूसरी वस्तु। व्यवहारिक मनुष्य बनो। व्यावहारिक वेदान्ती बनो।

(ग) युवक-संरक्षण

६३. बच्चे ही भविष्य के स्रष्टा हैं। वे ही भावी नागरिक हैं। वे ही राष्ट्र के भाग्य-विधायक हैं! उन्हें शिक्षित करो, अनुशासित करो, उचित ढांचे में डालो।

६४. प्रत्येक बच्चे के भीतर जीवन-शक्ति है। उसे अपने को व्यक्त करने का सुअवसर प्रदान करो। उसकी जीवन-शक्ति को मत कुचलो।

६५. जीवन से अवगत कराना ही शिक्षा का उद्देश्य है। इसे असांप्रदायिक होना चाहिए। विभिन्न संप्रदायों में मैत्री तथा बन्धुत्व स्थापित करना ही इसका लक्ष्य होना चाहिए।

६६. शिक्षण तथा अनुशासन की सफलता का रहस्य लड़के की उचित शिक्षा पर निर्भर है। प्रत्येक शिक्षक को अपने शिष्य के प्रति श्रद्धा रखनी चाहिए।

६७. छात्रों के शरीर तथा मन को स्वस्थ बनाना, उन में आत्म-विश्वास, नैतिकता, उत्साह एवं सुचरित्रता की स्थापना करना यही शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए।

६८. बुद्धि-शिक्षण एवं आत्म-विकास ये दोनों साथ-साथ होने चाहिए।

६९. आध्यात्मिक-शिक्षण के अनुसार ही सांसारिक एवं व्यावहारिक शिक्षण प्राप्त होना चाहिए।

७०. मनुष्य की मानसिक तथा नैतिक उन्नति उसकी वैज्ञानिक तथा यांत्रिक उन्नति के कारण नहीं हुई है।

७१. सांसारिक सफलता द्वारा शिक्षा का माप न करो। शिक्षा में जो नैतिक तथा आध्यात्मिक प्रगति का वास्तविक लक्ष्य है, उसका ह्रास कदापि न होना चाहिये।

७२. जीवन का वास्तविक मूल्यांकन न कर, छात्र पदवी एवं सम्पत्ति पर ही अधिक ध्यान रखते हैं।

७३. मनुष्य को निर्भय, अहंकार रहित, निःस्वार्थ, निष्काम बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिये।

७४. आधुनिक छात्रों की शिक्षा कुछ अधिक पुस्तकीय हो गई है। वे व्यावहारिक उपयोगी ज्ञान की अपेक्षा डिग्री-प्राप्ति के पीछे ही परेशान रहते हैं।

७५. छात्र अपने कालेज-जीवन में लक्ष्य रहित रहता है। उसका कोई निश्चित कार्यक्रम तथा लक्ष्य नहीं रहता।

७६. मन का संयम, अहंकार-दमन, दिव्य-गुणों का अर्जन, तथा आत्मज्ञान अथवा ब्रह्मज्ञान ही वास्तविक शिक्षा का लक्ष्य है।

७७. वैयक्तिक-चैतन्य का विकास तथा निज देश-जाति को वैभवशाली बनाने में हाथ-बँटाना ही शिक्षा का उचित अर्थ होना चाहिये।

७८. शिक्षा का लक्ष्य छात्रों के दैनिक जीवन में सादगी, सेवा तथा भक्ति के आदर्श का आरोपण करना है, जिससे वे सदाचारी एवं बलवान बनें और अपनी शिक्षा का उपयोग निर्धनों एवं विवशों के उपकार तथा देश, साधु एवं सन्तों की सेवा में करें।

७९. ये ही आदर्श हैं जिनको उत्तरोत्तर अधिक उत्साह के साथ व्यावहारिक रूप में छात्र-छात्राओं के सम्मुख रखने की आवश्यक्ता है।

८०. शिक्षा-विभाग में प्राच्य-पद्धति लाने की आवश्यकता है। छात्रगण, ऋषियों, साधुओं एवं सन्तों के प्रमुख सन्देश-

वाहक बनें और उनकी ज्ञान-ज्योति से दुनियाँ के कोने २ को आलोकित कर दें।

१. स्कूल तथा कालेजों में शुद्धता, ज्ञान, चरित्र, निष्काम सेवा की भावना, भक्ति तथा वैराग्यादि गुणों से विभूषित शिक्षक ही नियुक्त किये जायँ। तभी शिक्षा में सुधार हो सकेगा।

२. विज्ञान धर्मविरोधी नहीं, उसका अंग है।

३. विज्ञान का अतिक्रमण कर आध्यात्मिक जगत में प्रवेश करो।

४. वास्तविक धर्म विवादातीत है, उसका प्रगटीकरण जीवन में ही एक प्रकार से किया जा सकता है।

(घ) सत्संगति

५. आत्म-साक्षात्कार-रूपी मन्दिर में सत्संग प्रथम स्तम्भ है। अतः सत्संगति करो।

६. संत आध्यात्मिक ज्ञान के स्रोत हैं। पूर्ण नम्रता तथा आदर के साथ उनके पास जाओ।

७ सन्तों ने सांसारिक पदार्थ, सारी महत्वकांक्षाओं तथा सारे आदर-सम्मान का त्याग करना सीखा है।

८. जिज्ञासु एवं सच्चा साधक ही साधु-महात्माओं के सत्संग का मूल्य जानता है।

९. सत्संग के द्वारा साधक आंतरिक संग्राम में दृढ़ता, प्रलोभनों पर विजय, तृष्णाओं का दमन, तथा मन में सत्व-संवर्धनार्थ आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त करता है।

९०. एक सुयोग्य साधक जनता को केवल उत्साहित ही नहीं कर सकता, वरन् उसे आध्यात्मिक पथ का प्रदर्शन एवं संरक्षण भी दे सकता है।

९१. महान साधुओं एवं सन्तों का स्मरण करो। तुम अणुप्राणित बनोगे। वे मृत नहीं।

९२. वास्तविक तेजस्वी संन्यासी राष्ट्र की सभ्यता का पुनर्निर्माता तथा उसके भाग्य का विधाता है।

९३. नम्रता, करुणा, शान्ति, ज्ञान, क्षमा, आत्मनियंत्रण, समदर्शिता और प्रज्ञा साधुओं के आभूषण हैं।

९४. साधु-महात्माओं की संगति को प्राप्त करना दुष्कर है।

९५. साधु अथवा सन्त आत्मज्ञान द्वारा ज्ञान-सरिता में अपने मल का (अज्ञान का) प्रक्षालन करता है।

९६. सन्त-जीवन यापन करना ही सच्ची आराधना है।

९७. हर कदम पर योग में बाधाओं के गढ्ढे हैं। अतः गुरू को पथ-प्रदर्शनार्थ साथ ले लो।

९८. गुरू के द्वारा भगवन्नाम की शिक्षा लेना बहुत ही महत्वपूर्ण है। इस प्रकार मंत्र-चैतन्य सरलतापूर्वक जाग्रत हो जाता है।

९९. गुरू ही ईश्वर है। अतः गुरू की पूजा करो।

१००. ईश्वर की कृपा से ही गुरू का साक्षात्कार होगा।

१०१. तुम्हें स्वतः ही सात्विक-जीवन-यापन करना होगा।

१०२. सत्संग, सत्यासत्य-विवेक, वैराग्य, 'मैं कौन हूं' की जिज्ञासा और ध्यान के द्वारा तुम नित्यानंद तथा अमरत्व की प्राप्ति करोगे।

———

बाधाओं पर विजय

प्रथम खण्ड : तृतीय परिच्छेद

बाधाओं पर विजय

(क) रोग

(ख) कामना

(ग) अशुद्ध मनस्

(घ) निर्भय बनो

(ङ) समय नष्ट न करो

(च) ईश्वर-प्रणिधान
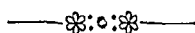
(क) रोग

१. दुर्बल, अशक्त तथा जीर्ण-शीर्ण वयःप्राप्त शरीर योगसाधना के लिए उपयुक्त नहीं।

२. काल्पनिक व्याधियों तथा रोगों के शिकार न बनो।

३. तुम्हारा शरीर सुदृढ़, स्वस्थ एवं शुद्ध बने। शरीर-निर्माण से ही राष्ट्र-निर्माण हो सकता है।

४. शीर्षासन, सर्वाङ्गासन, मत्स्यासन, पश्चिमोत्तानासन तथा कुछ सुखपूर्वक प्राणायाम का अभ्यास नित्यप्रति प्रातःकाल में किया करो। तुम्हें आश्चर्यजनक स्वास्थ्य की प्राप्ति होगी।

५. सदैव रोग की चिन्ता करने से यह भावना जम जाती है। सदा यह मनन करो 'मेरा शरीर तथा मन पूर्ण स्वस्थ हैं।'

६. सात्विक-आहार सेवन करो। तुम्हारी बुद्धि संस्कृत तथ स्मरण-शक्ति तीव्र हो जायगी। संस्कृत बुद्धि एवं सुन्द स्मरण-शक्ति के द्वारा तुम आत्म-साक्षात्कार करोगे।

७. भोजन करने के पहिले खाद्य-पदार्थ को भगवान् पर अर्पि करो; तदनन्तर प्रसाद-स्वरूप भोजन पाओ। इससे तुम्हार भोजन शुद्ध हो जायगा।

८ रोगों को ईश्वर का प्रसाद समझो।

९. बारम्बार इसका मनन करो कि 'मैं शरीर रहित निरामय सर्वव्यापक अमर आत्मा हूँ।'

१०. प्रत्येक रोग कर्म भोग ही है।

११. सारे रोगों की जड़ मन में है। सर्वप्रथम उसी का उपचार करो। शारीरिक रोग स्वतः अन्तर्हित हो जायेंगे।

१२. चिन्ता के द्वारा रक्त-चाप, हृदय-व्याधि, स्नायु-दौर्बल्य जैसे विविध संघातिक रोगों की उत्पत्ति होती है।

१३. भय द्वारा रुधिर-प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है। रक्त विषैला हो जाता है। प्रसन्नता तथा हास्य के द्वारा रुधिर-प्रवाह तीव्रतर हो जाता है। ये रुधिर-वर्द्धक टॉनिक का काम करते हैं।

१४. अस्वस्थता तो भ्रम ही है। स्थूल तथा सूक्ष्म शारीरिक कोषों से परे इसकी सत्ता कहीं भी नहीं। शरीर तथा मन ही रोग-ग्रस्त होते हैं; आत्मा जो तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है, इनसे परे है। वह रोग तथा मृत्यु से नित्य-मुक्त है।

१५. ब्रह्मचर्य स्फूर्ति प्रदान करता है। इससे शारीरिक तथा मानसिक शक्तियाँ बढ़ती हैं और शरीर तेजस्वी होता है। यह जीवन-ज्योति है।

१६. स्वास्थ्य एवं स्फूर्ति की प्राप्ति के लिए एक हद तक हठयोग का अभ्यास अत्यावश्यक है।

१७. शरीर, स्नायुमंडल तथा प्राण के ऊपर पूर्णाधिपत्य कायम करने के लिए हठयोग मानसिक एवं शारीरिक संयम का एक विज्ञान है।

१८. शरीर को नियंत्रित एवं अनुशासित करने के लिए हठ-योगिक प्रणाली साधकों की सहायिका है।

१६. रोग, चिन्ता, कष्ट ये सब केवल स्थूल तथा सूक्ष्म शरीर तक ही सीमित हैं। इनका आध्यात्मिक शरीर अथवा आत्मा पर कोई प्रभाव पड़ता नहीं।

२०. विचार, शब्द एवं कार्य्यों के बीच की विषमताएँ ही सारे कष्ट, दुःख एवं झगड़ों की जड़ हैं।

२१. रुग्णावस्था में अपने को अपने शरीर से असंग करो। बुद्धि तथा आत्मा से सम्बन्ध स्थापित करो। जैसे तुम सोचोगे वैसे ही हो जाओगे। अतः यह आस्था जमाओ कि तुम स्वस्थ हो। रोग अपने आप भाग खड़ा होगा।

२२. जप, कीर्तन, ध्यान, सत्व, प्राणायाम, आसन, टमाटर, अंगूर, पालक, शुद्ध वायु तथा धूप के द्वारा अपने रक्त की वृद्धि करो।

२३. नियताहार दीर्घायु बनाने का सर्वश्रेष्ठ साधन है।

२४. योनि-मुद्रा नवद्वार को अवरुद्ध करने तथा अनहत नाद सुनने में सहायता प्रदान करती है।

२५. बुद्धिमतापूर्वक इस शरीर का संचालन करो। अपने को पूर्णतः शिथिल करो। सुखपूर्वक प्राणायाम करो। नियमित ध्यान करो। तुम सुख, स्वास्थ्य एवं लम्बी उम्र प्राप्त करोगे।

(ख) कामना

२६. धन, सम्पत्ति तथा नाम और यश की कामनाएँ आत्म-साक्षात्कार के मार्ग की सबसे बड़ी बाधाएँ हैं।

२७. अज्ञान से ही कामना का जन्म होता है। विषय-सम्भोग की प्रवृत्ति ही मौलिक कामना है। कामना के नाश से अज्ञान का नाश हो जाता है।

२८. नश्वर शरीर, मन तथा अहंकार के साथ तादात्म्यता स्थापित कर अपने को अपूर्ण तथा सीमित समझने के कारण ही कामनाओं की उत्पत्ति होती है।

२९. कामना रूपी बीज से आवागमन के अंकुर निकला करते हैं।

३०. जैसी तुम्हारी कामना, वैसी ही तुम्हारी इच्छा होगी। जैसी तुम्हारी इच्छा, वैसा ही तुम्हारा कार्य्य होगा।

३१. जो व्यक्ति पूर्णतः निष्काम है, उसकी इच्छा-शक्ति पूर्णतः स्वतन्त्र होगी।

३२. वह सदानन्द है जो न तो किसी चीज की कामना करता है और न किसी चीज से भय ही खाता है।

३३. यदि तुम सांसारिक पदार्थों के लिए लालायित हो तो ये तुम्हारे आत्मसाक्षात्कार के मार्ग में बाधक सिद्ध होंगे।

३४. विषय-सुखों की ओर सोचने की प्रवृत्ति ही बन्धन एवं जन्म-मरण के चक्र का कारण है।

३५ काम और लोभ ये संन्यास के बाधक हैं।

३६. कामिनी, कांचन, कीर्त्ति ये तीनों आत्म-साक्षात्कार के बाधक हैं।

३७. कामी तथा लोभी जन आध्यात्मिक जीवन के लिए अनुपयुक्त हैं।

३८. क्रोध, काम, लोभ ये आध्यात्मिकता के आधारभूत शत्रु हैं।

३९. दुर्बल इच्छाशक्ति के ऊपर सबल कामनाएँ अधिपत्य जमा लेती हैं।

४०. जहाँ राग है, वहाँ भय है।

४१. कामनाओं को क्षीण करते जाओ और आत्म-सन्तुष्ट हो जाओ।

४२. विवेक तथा वैराग्य के द्वारा कामना का समूल उच्छेदन करो।

(ग) अशुद्ध मनस्

४३. मन ही शान्ति-संहारक है; मन ही सत्य विनाशक है।

४४. अपने मन को अपना मित्र बनाओ।

४५. अपने मन तथा इन्द्रियों को नियंत्रित करो; यही सबसे बड़ी विजय है।

४६. मन ही सुख दुःख के अनुभवों का उत्तरदायी है। मनः संयम ही सर्वोत्तम योग है।

४७. नियंत्रित मन महत् कार्यों के सम्पादन में समर्थ है। अनियंत्रित मन चिरंतन दुःख तथा व्याधियों का जनक है।

४८. वही जिसने अपने मन को नियन्त्रित किया है सदा शान्त एवं प्रसन्न रहेगा।

४९. छन्ना-पत्र के समान ही मन का प्रयोग करो। इस पर अ दृष्टि रखो, जिसमें एक भी बुरा विचार घुसने न पा व्यर्थ विचारों को छान कर फेंको।

५०. शंका सबसे बड़ी दुर्बलता है। यह तुम्हारी शत्रु है। स सबसे बड़ा पाप है। इस शंका का संहार करो। इ संहारक मन का संहार करो।

५१. शकी मनुष्य, जिसका मन उद्भ्रान्त है, आध्यात्मिक ज्ञा की प्राप्ति नहीं करता।

५२. बुद्धि भी बाधक है। अत्यधिक बहस करना आधुनि सभ्यता का अभिशाप है।

५३. विश्वास आचरण का नियामक है। विचार के द्वारा चरि का गठन होता है।

५४. मनुष्य अपने मस्तिष्क में उठे हुए प्रत्येक विचार तथ किये हुए प्रत्येक कार्य के द्वारा परिवर्त्तित होता रहता है।

५५. जो कुछ तुम इस समय हो वह सब तुम्हारे विचारों का ही परिणाम है। इसका आधार विचार ही है। यह विचारों द्वारा ही गठित हुआ है।

५६. तुम्हारे बंधन का मूल-कारण मोह है।

५७. मोह भ्रम है। यह शुद्ध प्रेम नहीं है। यह शरीरगत संबंध है, आत्मगत नहीं।

५८. निम्न भावुकताओं पर नियंत्रण रखो। भावुकता शक्ति

एवं बल का अपव्यय है। यह तर्क-संगत-ज्ञान को आच्छादित कर स्थूल शरीर को धारण करती है।

५९. दर्शक को अभिनेता की अपेक्षा अधिक आनन्द की प्राप्ति होती है। उसी प्रकार अपने विचारों के साक्षी हो जाओ। तुम भी अधिकाधिक चिरंतन सुख की प्राप्ति करोगे।

६०. दम्भ, राजनैतिक धूर्त्तता, ईर्ष्या, स्वाभिमान तथा छल ये सब भक्ति, शांति तथा ज्ञान के शत्रु हैं। इनका दमन करो।

६१. घृणा, घमंड उद्दंडता, प्रतिकार-भावना, क्रोध, निष्ठुरता, लोभ आदि पाशविक गुण हैं।

६२. ज्ञान की खोज करो, सांसारिक शक्तियों की नहीं। शक्तियाँ आत्म-साक्षात्कार के बाधक हैं।

६३. ऐ मन! अपने वास्तविक धाम की ओर मुड़ो। ब्रह्म अथवा आत्मा ही तुम्हारा वास्तविक धाम है, वहीं चिरंतन शान्ति एवं अमरानन्द है।

(घ) निर्भय बनो

६४. तुम्हारी सारी परिस्थितियों का निर्धारण ईश्वर तुम्हारी भलाई के लिये ही करता है। कृपया हिम्मत न हारो।

६५. ईश्वर के सारे कार्य्य तुम्हारी भलाई के लिये ही होते हैं। बाद में तुम्हें इसका ज्ञान होगा। धीरज धरो।

६६. सांसारिक कष्ट, बाधाओं, दुखों तथा दुर्दिनों में ईश्वर ही तुम्हारा एक मात्र रक्षक और विधाता है।

६७. ईश्वर तुम्हारी सारी प्रार्थनाओं को ध्यान से सुनता तथा उनकी पूर्ति करता है। तुम्हारी प्रार्थना तुम्हारे हृदय के अन्तरम से निकलनी चाहिये।

६८. जितना ही तुम अपने जीवन में नवीन परिवर्त्तन संघटित करने की चेष्टा करोगे, जितना ही तुम शुद्ध तथा सात्विक जीवन व्यतीत करोगे उतने ही अधिक सुअवसरों को तुम प्राप्त करोगे।

६९. प्रार्थना ही जीवन-ग्रंथ का प्रथम पाठ है।

७०. प्रार्थना ही तुम्हारे जीवन का आधार है।

७१. विपत्ति के द्वारा ही अमरानन्द का दरवाजा उन्मुक्त होता है।

७२. बलवान बनो। साहसी बनो। डरो मत। कोई भी शक्ति तुम्हें अवरुद्ध नहीं कर सकती। ऐ वीर! कदम बढ़ाते जा, उन्नति की ओर बढ़ते जा और परमात्मा में ही आश्रय ग्रहण कर।

७३. आध्यात्मिकता के पथ पर निर्भयतापूर्वक बढ़ते जाओ।

७४. मोमबत्ती जलती है। परन्तु उसका कोई भी तत्व विनष्ट नहीं होता। किंचिन्मात्र आध्यात्मिक-प्रयत्न भी कदापि व्यर्थ नहीं जा सकता।

७५. साधना की प्रारम्भिक अवस्थाओं में उत्थान-पतन ही अधिक होते हैं।

७६. बाधाएँ तथा अनुपयुक्त परिस्थितियाँ ईश्वर-प्रेषित सुअवसर है, जिन से तुम्हारी इच्छा-शक्ति बढ़ेगी और तुम धीर बनोगे।

७७. संग्राम जितना ही भीषणतर होता है उतना ही अधिक यश प्राप्त होता है। आत्मसाक्षात्कार के लिए विकट-संग्राम की आवश्यकता है।

७८. तुम कहते हो कि तुम्हारा जीवन कष्टमय हो रहा है। प्रह्लाद के बारे में सोचो। ध्रुव का ध्यान धरो। इन से उत्साह ग्रहण करो और शान्त तथा निश्चिन्त हो जाओ।

७९. निकृष्टता का साहसपूर्वक सामना करो। महत्ता के लिये वीरतापूर्वक संग्राम करो।

(ङ) समय नष्ट न करो

८०. समय ही जग जीवन है। यह अमूल्य कोष है। एक क्षण भी व्यर्थ न गँवाओ।

८१. समय संपत्ति से भी अधिक मूल्यवान है।

८२. छोटे छोटे कार्यों से ही महत् कार्यों का निर्माण होता है।

८३. दिव्य-चैतन्य के उत्तरोत्तर प्रस्फुटन को ही आध्यात्मिक जागरण कहते हैं।

८४. संसार में रहकर, संसार के द्वारा ही तुम अपनी मुक्ति को प्राप्त करो।

८५. आत्मान्तर्गत आध्यात्मिक जीवन यापन करने का सतत प्रयत्न करो।

८६. यह विचित्र संसार ज्ञान का महान् विश्वविद्यालय है अपने पाठों को पढ़ो और ज्ञानी बन जाओ।

८७. जीवन-पथ द्वन्द्वों एवं परीक्षाओं से परिपूर्ण है। जीवन विजयों का एक क्रम है। हृदय रूपी रण-भूमि में अपने आन्तरिक शत्रुओं के साथ वीरतापूर्वक युद्ध करो।

८८. ईश्वर में निवास करो। उसी में जीवन यापन करो। उसी में भ्रमण करो। ईश्वरीय ज्ञान में तन्मय हो जाओ।

८९. प्रयास करो। प्रयत्न करो। परिश्रम करो। हर क्षेत्र में सफलता की प्राप्ति के लिये यह एक पवित्र मंत्र है।

९०. स्फूर्त्तिपूर्ण बनो, ध्वनिपूर्ण नहीं।

९१. प्रतिदिन नियत समय पर आध्यात्मिक पुस्तकों का पाठ करो। प्रार्थनायुक्त हो कर निश्चिन्त एवं एकाग्र मस्तिष्क के साथ अबाध गति से इनका आद्योपांत अध्ययन करो।

९२. गीता शक्ति तथा ज्ञान का उद्गम है। यह नीति, दर्शन, भक्ति तथा योग के पाठों को पढ़ाती है।

९३. अपने दैनिक जीवन में योग को एक व्यावहारिक सत्य बना डालो। व्यावहारिक योगी बनो!

९४. आलस्य ही निराशा एवं असफलता का जनक है।

९५. आराम-पसंद होने के कारण ही तुम्हारी नसें कमजोर हो

गई हैं। सादगीयुक्त एवं परिश्रमी जीवन व्यतीत करो। बलवान बनो। सुगठित बनो।

९६. आज सेवा, प्रेम, उत्सर्ग, वैराग्य, संन्यास, भक्ति, समाधि जैसे आर्ष आदर्शों से सब लोगों ने मुँह मोड़ लिया है। फलस्वरूप सर्वत्र कष्ट, अशान्ति, संग्राम, लूट तथा विपत्ति का ही व्यापार दृष्टिगत होता है।

९७. ऋषियों तथा साधुओं के इस संदेश में भारत की ही नहीं वरन् समस्त संसार एवं सभ्यता की आशा सन्निहित है।

९८. तुम्हारा जीवन सतत यज्ञ बने।

९९. अनुशासित रहो, तुम धन्य हो जाओगे। अनुशासन की अवहेलना करो और तुम्हें दण्ड मिलेगा।

१००. समय ही जीवन है। आध्यात्मिक अन्वेषणों में ही इसका सदुपयोग करो।

१०१. आज के दिन पर तुम्हारा अधिकार है। सम्भवतः कल का दिन तुम्हारे हाथ कभी भी न आ सके।

१०२. तुमने जीवन के एक बड़े हिस्से को व्यर्थ गँवाया है। अभी भी कुछ समय शेष है। इसका यथासम्भव सदुपयोग करो। तुम भी आत्मसाक्षात्कार कर चिर आनन्दित हो सकते हो।

१०३. ऐ मनुष्य! ऐ अज्ञानी! ऐ हठी! ऐ मूर्ख! तूने अपने जीवन को व्यर्थ गँवाया। कम से कम अब भी तो अपने शेष जीवन को जप, कीर्त्तन, ध्यान तथा निष्काम सेवा में लगा।

१०४. एक क्षण भी व्यर्थ न गँवाओ। जप, कीर्त्तन, साधु तथ दीन जनों की सेवा में निरत रहो। ध्यान करो।

(च) ईश्वर प्रणिधान

१०५. ईश्वर पर निर्भर रहो। भविष्य की चिन्ता न करो पक्षियों तथा जानवरों से भी शिक्षा ग्रहण करो।

१०६. ईश्वरीय गान गाओ। तेरी मुखाकृति दैवी ज्योति से दीप्त हो।

१०७. जो कुछ भी घटना घटित हो उसका सहर्ष स्वागत करो।

१०८ अपनी सर्वानन्दमयी आत्मा में ही निरन्तर मग्न रहो।

१०९. ईश्वर-प्रणिधान का अभ्यास करो। प्रतीक्षा करो, परिणाम देखो। हिम्मत न हारो। चिन्ता न करो। वह अपनी महती कृपा से तुझे ओत-प्रोत कर देगा।

११०. भगवान् के कार्य रहस्यमय हैं। सारी दृष्टिगत असफलताओं में भी कुछ न कुछ अच्छाई अवश्य है; तुम उसे देखने में अभी समर्थ नहीं हो। समय उसका स्पष्टीकरण करेगा। धीर बनो।

१११. आध्यात्मिक मार्ग में कदापि अधीर न बनो। धीरज धरो। शान्त बनो। प्रयास करो, प्रयत्न करो, परिश्रम करो।

११२. शरीर के प्रति इस महत् सम्बन्ध का त्याग करो। इस शरीर-भावना को नष्ट हो जाने दो। सर्वव्यापी अमर आत्मा के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित करो।

११३. तू अमरत्व का शिशु है। तू अमर-पुत्र है। शक्ति का गायन कर। वीर बन। बहादुर बन। वज्रवत् शक्तिशाली बन।

११४. बाधाओं की चिन्ता मत करो। वे स्वतः अन्तर्हित हो जायेंगी। भगवान् तथा उसके नाम में ही आश्रय ग्रहण करो।

११५. ईश्वर तुम्हारे सारे विचारों एवं तुम्हारी सारी गति-विधियों की निगरानी कर रहा है। वह तुम्हारी कठिनाइयों को अवश्य दूर करेगा।

योग-मार्ग

प्रथम खण्ड : चतुर्थ परिच्छेद

योग-मार्ग

———❀:o:❀———
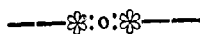
(क) आध्यात्मिक-जीवन

(ख) आध्यात्मिक-अनुशासन

(ग) आत्मसाक्षात्कार की कुंजी

(घ) ध्यान-संबन्धी आवश्यक बातें

(ङ) महत्वपूर्ण लक्ष्य

(च) सफलता का रहस्य—साधना

(छ) कृपा

(क) आध्यात्मिक जीवन

१. आध्यात्मिक साधना में पूर्ण वैराग्य एवं श्रद्धा का होना अनिवार्य्य है।

२. संन्यास के बिना कोई भी आध्यात्मिक उन्नति संभव नहीं। संन्यास ही ज्ञान है।

३. कायर मनुष्य संन्यासमय जीवन-यापन नहीं कर सकते।

४. संन्यास बहुत कठिन है। अल्प जन ही इस पथ व ग्रहण करते हैं।

५. अतः संन्यास परमावश्यक है।

६. साधक में सात्विक मन, मुमुक्षुत्व तथा धैर्य्य का रहन आवश्यक है।

७. बहुत साधकों में मुमुक्षुत्व की कमी रहती है। यही आलस्य की जड़ है।

८. व्यक्ति व्यक्ति में विभिन्न रुचियां होती हैं। परन्तु सबों को एक ही लक्ष्य तक पहुँचना है, एक ही उद्देश्य को ग्रहण करना है और वह है—प्रज्ञानं ब्रह्म।

९. शान्त बनो। प्रसन्न चित्त बनो। साहसी बनो। आत्म-संयमी बनो।

१०. सभी परिस्थितियाँ एवं घटनाओं में एकरसता का निर्वाह करो।

११. शिष्य के लिये आवश्यक गुणों में एक परमनिष्कामता का गुण ही सर्वोपरि है।

१२. शान्ति, संतोष, सत्संग, सत्य-संकल्प, एवं समरसता इन छहों गुणों को याद रखो और इनका अभ्यास करो।

१३. विवेक, वैराग्य एवं विजनता इन तीनों गुणों को याद रखो और इनका अभ्यास करो।

१४. सच्चे साधकों के लिये साधुओं के जीवन ही पथ-पदर्शक का काम करते हैं।

१५. कामना का दमन करो। मन को नियंत्रित करो। इंद्रियों का संयम करो! इन्द्रियों पर विजय पाओ। आध्यात्मिक साधकों का यही धर्म-युद्ध है।

१६. जो व्यक्ति नाम यश, प्रभुत्व एवं लौकिक तथा पारलौकिक सुखों की कामना करता है, वह कदापि योग में सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।

१७. यदि तुम अपनी सिद्धियों के वशीभूत होओगे तो तुम परम लक्ष्य की प्राप्ति में असफल हो जाओगे। अतः सिद्धियों से सावधान!

१८. आंतरिक साम्य-स्थिति के द्वारा ही साधक की वास्तविक आध्यात्मिक उन्नति की माप की जाती है।

१९. तपस्या का अर्थ यह नहीं कि तुम अपने शरीर को क्षार एवं धूल से ढके रखो। सेवा करो। प्रेम करो। दान दो। सात्विक बनो। ध्यान करो। साक्षात्कार करो। यही तपस्या है।

२०. श्रद्धा, श्रद्धा, श्रद्धा रखो। आत्मा को जानो। अपने वास्तविक स्वरूप का साक्षात्कार करो।

२१. शुभ श्रवण करो। शुभ दर्शन करो। शुभ कार्य्य करो। तुम आत्म-साक्षात्कार करोगे।

२२. मुमुक्षुत्व-बुद्धि के साथ साथ तुम पर पूर्णाधिकार प्राप्ति के लिए कुवृत्तियों की हरकतें भी बढ़ेंगी।

२३. अतः तुम अपनी साधना में नियमित एवं प्रयत्नशील रहो।

२४. प्रयत्नशील बनो। व्यर्थ की बातों तथा व्यर्थ के कार्यों से समय बचाकर अपनी आध्यात्मिक साधनाओं में शनैः-शनैः अधिक समय लगाने का प्रयत्न करो।

२५. अपने कर्तव्यों का पालन सुचारुरूपेण करो। गुरु के संरक्षण में धार्मिक ग्रन्थों का पुनराध्ययन करो। आत्म-साक्षात्कार की महती आकांक्षा रखो। तन-मन से गुरू की सेवा करो। तभी तुम आत्मज्ञान की प्राप्ति करोगे।

२६. अपनी दुनिया की सृष्टि करो। शांति, संतोष, जिज्ञासा, तथा साहस जैसे आभ्यंतरिक संगियों को सदा साथ रखो।

२७. श्रद्धा तथा अविरल भक्ति के द्वारा पुरुषार्थ करो। तुम अंततः विजयी होओगे।

२८. सर्व प्रथम सारे बन्धनों को ढीला करो। भ्रमावरोध से ऊपर उठो। शून्यता तथा रिक्तता का अतिक्रमण करो। बहादुर बनो। पीछे की ओर न देखो। अग्रतः बढ़ते जाओ। अन्ततः अमर ज्योतिर्मय लोक में प्रवेश करो।

२९. बुद्धि से आसक्त न होओ। जिज्ञासा करो। बुद्धि के परे जाओ। ज्ञान लोक के साम्राज्य में प्रविष्ट हो जाओ।

३०. प्रिय साधक! अन्य सभी वस्तुओं का मानसिक त्याग करो। वैराग्य को दृढ़ बनाओ।

३१. समय का मूल्य जानो। एक क्षण के अपव्यय की भी पूर्ति तुम नहीं कर सकते। समय अमूल्य है।

३२. अपना प्रत्येक क्षण आध्यात्मिक कार्य तथा सेवा में व्यतीत करो।

३३. अवकाश-प्रेमी न बनो। एक मिनट भी व्यर्थ न गँवाओ। बहादुर बनो। सत्य का इसी क्षण साक्षात्कार करो।

३४. आन्तरिक शुद्ध चैतन्य से सतत सम्बन्ध जोड़ने का अभ्यास करो। अपने को शुद्ध अथवा परम चैतन्य में संस्थापित कर डालो।

(ख) आध्यात्मिक अनुशासन

३५ इन्द्रिय तथा मन ये ही तुम्हारे वास्तविक शत्रु हैं; इन पर विजय पाओ।

३६. मन को अपना आज्ञाकारी बनाना ही आध्यात्मिक अनुशासन है।

३७. मन को पीटो। इसे कोड़े लगाओ। अहंकार को कुचल डालो। दृढ़ संकल्प के साथ बढ़ते जाओ। असीम शान्ति एवं आनन्द के साम्राज्य में प्रवेश करो।

३८. आत्मनिरीक्षण करो। अपने मन का विश्लेषण करो तथा इसको परिष्कृत करने का प्रयास करो।

३९. आत्मनिरीक्षण द्वारा अपने अमर स्वरूप की प्राप्ति करो।

४०. आन्तरिक आध्यात्मिक जीवन की प्राप्ति करो। तामसिक कुवृत्तियों के विरुद्ध युद्ध करो।

४१. आध्यात्मिक संकल्प करो और उनका पालन करो। इससे तुम्हें उन्नति करने में तथा शीघ्रातिशीघ्र लक्ष्य की प्राप्ति में सहायता मिलेगी।

४२. अपने संकल्पों को पूर्णरूपेण कार्यान्वित करो। इस से तुम्हारी इच्छा-शक्ति बलवती होगी।

४३. आसन, प्राणायाम तथा सात्विक मिताहार के द्वारा आलस्य पर विजय पाओ।

४४. काम, क्रोध, लोभ, द्वेष, घृणा ये सब अचेतन मन में सतत कार्यशील रहते हैं। खबरदार! सावधान रहो। सचेत रहो। सतर्क रहो। उनको समूल नष्ट करो। अन्यथा वे पुनः बलशाली हो कर तुम्हें कुचल डालेंगे और तुम्हारी साधनाओं को निगल जायेंगे।

४५. जप, प्रार्थना, ध्यान, सत्संग, स्वाध्याय, तथा सात्विक भोजन द्वारा शनैः शनैः राग का दमन करो।

४६. बुद्धि को कुशाग्र बनाओ। अहंकार को क्षीण करो। मन को शुद्ध करो।

४७. आत्मशुद्धि में पूर्णतः संलग्न रहो। दिन-प्रति-दिन आध्यात्मिक शक्ति का संग्रह करते जाओ।

४८. मन की शुद्धि, अहंकार का विनाश, वैराग्य, अथवा साँसारिक पदार्थों के प्रति अनासक्ति ये सब ईश्वर-साक्षात्कार के लिए प्राथमिक गुण हैं।

४९. जीवित रहना चाहते हो तो जीवनोत्सर्ग करो।

५०. गुरु का काम तो पथ-प्रदर्शन करना है।

५१. पुरानी कुवृत्तियां मन में पुनः प्रवेश पाने की चेष्टा करेंगी। सतर्कता से निरीक्षण करो।

५२. आत्म-निरीक्षण, आत्म-विश्लेषण तथा ध्यान के द्वारा हृदय-स्थित आत्मा को एकाग्रता के साथ ढूँढो।

५३. ऐ साधक! अपने पास धन न रखो। इससे तुम्हारा वैराग्य शिथिल तथा तुम्हारी इच्छा-शक्ति दुर्बल हो जायगी। यह तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नति में विघ्न रूप होगा।

५४. तप से परिपूर्ण जीवन व्यतीत करो।

५५. आन्तरिक संग्राम में मन तथा इन्द्रियों द्वारा पाई गई अल्प विजय भी तुम्हारी इच्छा-शक्ति की वृद्धि करेगी तथा तुममें अधिक साहस एवं संकल्प को संस्थापित करेगी। परन्तु इस सफलता से फूल मत पड़ो। नम्र तथा कृतज्ञ बनो।

५६. सूर्य, अग्नि, नदी, पुष्प, तथा वायु से समदर्शिता की शिक्षा ग्रहण करो। ये किसान तथा राजा, साधु तथा पापी, किसानी तथा मन्त्री सबों की समान सेवा करते हैं।

५७. आध्यात्मिक साहस का रहस्य ज्ञान में छिपा हुआ है।

५८. उस चीज की प्रतिज्ञा न करो, जिसे तुम पूर्ण नहीं कर सकते। परन्तु यदि प्रतिज्ञा करो तो उसका हर हालत में पालन करो।

५९. ऐ राम! अपने मन को शान्त करो। अपने वास्तविक दिव्य-स्वरूप को पहचानो। विषय सुखों के पीछे न पड़ो। अमर आत्मानन्द की खोज करो।

६०. सर्वप्रथम अपने को पूर्ण बनाओ। सर्वप्रथम अपनी रक्षा करो।

६१. तुम अपनी स्त्री तथा बच्चे का त्याग कर सकते हो, तुम

धन का त्याग कर सकते हो, परन्तु यश का त्याग करना अत्यन्त कठिन है।

६२. ईश्वर के सिवा अन्य किसी पर निर्भर न होओ।

६३. अटल विश्व के साथ हर हालत में सत्य का अनुगमन करो। जन-मत अथवा आलोचना की परवाह न करो।

६४. एक गीता की पुस्तिका, एक छोटी सी माला, तथा एक छोटी मंत्र-पुस्तिका, अपनी जेब में रखो। अवकाश के समय इनका व्यवहार करो।

६५. बुरी बातें न बोलो। बुरी बातें न सुनो। बुरी चीजें न देखो। बुरी बातें न विचारो। तुम शीघ्र ही ईश्वर-साक्षात्कार करोगे।

६६. ईश्वर भिक्षुकों के वेष में घूमता है। वह रोगियों के वेष में कराहता है। अपनी आँखें खोलो। सबों में उसका दर्शन करो। सबों की सेवा करो।

६७. अपने विचारों की शुद्धि करो। प्रथमतः अपनी आत्मा का सुधार करो।

६८. शुद्धता लाओ। ध्यान करो। ईश्वरत्व का प्रस्फुटन करो। यही तुम्हारा प्राथमिक कर्तव्य है।

६९. जैसे भी वातावरण में रहो, उसी के अनुसार अपने मन को भी उपयुक्त बनाओ। तुम शान्ति एवं शक्ति का उपभोग करोगे।

७०. जाँच की कठिन घड़ियों में अटूट धैर्य तथा घृणित

अत्याचारों में अविचल तितिक्षा का अभ्यास करो। तुम्हारे सारे प्रयत्न सफलीभूत होंगे।

७१. नम्र बनो, आडंबरहीन बनो, उपकारार्थ तत्पर रहो।

७२. पाशविक सुखोपभोग की तृष्णा से बढ़कर दिव्य-जीवन की कोई भी अवरोधिका नहीं।

७३. आध्यात्मिक संग्राम में निरन्तर एवं सतत सतर्कता की आवश्यकता है।

७४. यदि तुमने अपनी जिह्वा पर विजय पाई तो तुम्हारी सारी इन्द्रियाँ तुम्हारे ही अधीन हैं।

७५. इच्छा-शक्ति को बलवती बनाओ। बहादुर बनो। तत्पर रहो। जाँच तथा परीक्षा की वेला आने वाली है।

७६. जिज्ञासा, वैराग्य तथा ध्यान के द्वारा काम का दमन करो।

७७. शिशुवत् बनो। साधारण बनो। नम्र बनो। ज्ञान-मन्दिर के कपाट नम्र तथा सरल मनुष्यों के लिए उन्मुक्त रहते हैं।

७८. शान्त होकर बैठ जाओ। मन को शान्त करो। उसे शुद्ध बनाओ। एकाग्र भक्ति करो। तुम्हें अमर शान्ति तथा आनन्द की प्राप्ति होगी।

७९. ध्यान वह कुञ्जी है, जिसके द्वारा अमर लोक के दरवाजे उन्मुक्त किये जाते है।

८०. ध्यान के द्वारा समाधि की प्राप्ति होती है।

८१. समाधि ब्रह्म अथवा परमात्मा के साथ तुम्हारा सम्बन्ध स्थापित कराती है।

८२. नियमित ध्यान के द्वारा ही तुम्हें वास्तविक सुख की प्राप्ति होगी।

८३. ध्यान प्राणशक्ति की गतिशील अवस्थिति है। इसके द्वारा मनुष्य देवत्व में परिणित हो जाता है।

८४. हृदयवासी आत्मा अथवा अपने स्वरूप का ध्यान करो। आनन्द-सागर में गहरा गोता लगाओ।

८५. ध्यान में मन, जो इन्द्रियों एवं राग रूपी राक्षसों का अधिपति है, मृत्यु को प्राप्त होता है।

८६. धर्म, दर्शन और ध्यान इन तीनों को साथ-साथ चलना चाहिये।

८७. ध्यान करो और चतुर्दिक चैतन्य की अनुभूति करो।

८८. शीघ्रता करो। विकम्पित न होओ। समाधि में निमग्न हो जाओ। अपने लक्ष्य को प्राप्त करो।

८९. हृदय को उन्मुक्त करो। दैनिक ध्यान में अपनी चेतना को भगवानोन्मुख विकसित करो। अपने को उस ईश्वरीय ज्योति के समीप लाते जाओ।

९०. जब तुम जप करते हो अथवा ध्यान करते हो उस समय मन अपने विनाशकारी स्वभावों से मुक्त हो जाता है।

९१. ऐ राम ! तुम्हारे ही हृदय के अन्दर उस व्यापक सत्य ब्रह्म की अवस्थिति है। शुद्ध हृदय से बढ़ कर और कोई भी पवित्र मन्दिर नहीं। इन्द्रियों को समेट लो। इस मन्दिर में घुसो और मौन तथा गहन ध्यानावस्था में उस ब्रह्म की संगति करो।

९२. तूफानों से आलोड़ित एवं अशान्तिपूर्ण ऊपरी सतह से बहुत नीचे, मानसिक कोलाहलपूर्ण वृत्तियों से बहुत नीचे, शान्ति एवं निस्तब्धता का प्रशान्त महासागर लहरा रहा है। गहन एवं गम्भीर ध्यान के द्वारा इसका साक्षात्कार करो।

९३. नियमित रूप से ध्यान का अभ्यास करो। अपने हृदय के अन्तर्गत गहरा से गहरा गोता लगाओ।

९४. तत्वमसि अथवा सोऽहस्मि के महावाक्यों का भावसहित ध्यान करो। तुम आत्म-साक्षात्कार करोगे।

९५. ध्यान लगाओ। हृदय कोष्ठकों में प्रविष्ट होओ। गम्भीरतर से गम्भीरतम की ओर प्रयाण करो। ईश्वरत्व का साक्षात्कार करो।

९६. सामाजिक तथा राजनैतिक नेताओं, वक्ताओं तथा संस्थापकों की अपेक्षा वही मनुष्य सारे संसार की अधिक सेवा कर सकता है; जो संन्यास तथा ध्यान का अभ्यास करता है।

९७. शान्तिमय ध्यानकाल में ही आध्यात्मिक चैतन्य का प्रादुर्भाव होता है।

९८. ध्यानकाल में तुम संसार तथा शरीर को भूल जाते हो।

९९. ध्यान काल में तुम परम पुरुष के समक्ष रहते हो।

१००. ईश्वर कहाँ है ? मेरे बच्चे, भीतर देख। दृष्टि-निक्षेप कर। वह तेरे हृदय में ही निवास करता है। उसकी स्थिति का मान कर।

१०१. ध्यान के द्वारा तुम्हारा हृदय प्रकाशित होगा। अतः ध्यान करो। ध्यान करो।

१०२. ध्यान तुम्हें ईश्वरीय ज्ञान, अनन्त आनन्द एवं अमर ज्योति के लोकों की ओर प्रवृत्त करता है। अतः ध्यान करो। ध्यान करो।

१०३ ध्यान वह आध्यात्मिक सीढ़ी है, जिसके द्वारा साधक अमर ब्रह्मानन्द के धाम की ओर प्रगतिशील होता है। अतः ध्यान करो। ध्यान करो।

१०४. ध्यान वह सीढ़ी है जो मृत्य एवं अमर लोकों के बीच सम्बन्ध स्थापित करती है। अतः ध्यान करो। ध्यान करो।

१०५. सारे साधकों को मैं एक ही सीख देता हूं और वह है 'ध्यान करो।'

(घ) ध्यान सम्बन्धी आवश्यक बातें

१०६. प्रारम्भ में ध्यान करना कष्टजनक प्रतीत होता है, पर अन्ततः इससे अमरानन्द एवं असीम सुख की प्राप्ति होती है।

१०७. रजोगुण को क्षीण करते जाओ। सत्वगुण की अधिकाधिक वृद्धि करो। तभी मन शान्त हो जायेगा और ध्यान शान्तिमय तथा अविच्छिन्न होगा।

१०८. ध्यान में नियमित बनो। यदि तुम एक दिन भी अपना अभ्यास छोड़ोगे तो उस क्षति-पूर्ति के लिए एक सप्ताह का प्रयत्न कहीं पर्याप्त हो सकेगा।

१०६. बैठ जाओ और ध्यान करो। अपने मन का निरीक्षण करो। यदि मन भटके तो ऐसा विचार करो कि मैं तो साक्षीमात्र हूं।

११०. जब मन बहिर्मुख होने लगे, तब कुछ स्तोत्र, गीता तथा उपनिषद् के श्लोक तथा मन्त्रों का पाठ करो।

१११. जब तुम ध्यान करते हो, उस समय कुछ अनावश्यक विचार तुम्हारे मन में घुसेंगे। उनको दबाने की कोशिश न करो। उनकी उपेक्षा करो। वे स्वयं अन्तर्हित हो जायेंगे।

११२. जब तुम ध्यानार्थ बैठो, उस समय घरेलू झंझटों, व्यावसायिक चिन्ताओं, कार्यालय सम्बन्धी विचारों तथा अन्य आशाओं एवं महत्वाकाँक्षाओं का त्याग कर डालो।

११३. ध्यानारम्भ के पहिले नैतिक-पूर्णता-प्राप्ति की प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं।

११४. अहिंसा, सत्य तथा ब्रह्मचर्य का पालन करो। साथ ही साथ ध्यानाभ्यास करो।

११५. ध्यान के द्वारा आत्म-शुद्धि में सहायता मिलती है।

११६ ध्यान से हृदय शुद्ध एवं सुदृढ़ होता है। इससे नाड़ियों में एकरसता का संचार होता है। इससे मनःशक्ति प्रखर होती है। यह आध्यात्मिकता के मार्ग में प्रशस्ति प्रदान करता है।

११७. आलस्य ध्यान का सबसे बड़ा बाधक है।

११८. नियमित ध्यानाभ्यास के द्वारा मन अधिकाधिक शान्त बन जाता है। सारे मन के व्यापार लुप्त हो जाते हैं।

११९. ध्यान के द्वारा आध्यात्मिक सन्तुलन की प्राप्ति होती है। इससे साधक को जीवन-संग्राम में शक्ति, आनन्द एवं सौन्दर्य के साथ टिके रहने में सहायता मिलती है।

१२०. जो नित्यप्रति ध्यान करता है, वह कष्ट, क्लेश, दौर्बल्य तथा बाधाओं से विमुक्त हो जायगा।

१२१. नियमित ध्यान से मन की बहिर्मुखी वृत्तियाँ शिथिल प जाती हैं।

१२२. धारणा, ध्यान एवं समाधि के लिए मन का एकाग्र हो अत्यन्त आवश्यक है।

१२३. जब तुम 'ओ३म्' पर ध्यान करते हो, तब मन शुद्ध ह जाता है।

१२४. विश्वास-रूपी दीपक को सत्संगति-रूपी स्नेह की सतत आवश्यकता होती है। ध्यान के द्वारा बत्ती को छाँटते रहना चाहिये।

१२५ प्रातः बिछावन से उठते ही जप और ध्यान करो। तब आसन तथा प्राणायाम का अभ्यास कर।

१२६. प्रार्थना करो। ध्यान करो और नित्यप्रति लक्ष्य की ओर बढ़ते जाओ।

१२७. ध्यानार्थ बैठ जाओ। आँखें बन्द कर लो पंचेन्द्रियों के सारे व्यापारों से मन को अवरुद्ध कर लो।

१२८. मन को ध्यानार्थ बाध्य न करो। प्रथमतः मन के रहस्यों को जानो। गुणों की वृद्धि करो। तीनों गुणों के स्वभाव का अध्ययन करो। शुद्ध बनो। तभी ध्यान सरल एवं सुलभ हो जायगा।

१२९. यदि तुम्हारी इष्ट-देवता की पूरी मूर्ति ध्यान में नहीं आती तो उसके किसी अंग-विशेष जैसे मुख अथवा पैर पर ही ध्यान लगाने की कोशिश करो।

१३०. भाव अथवा मानसिक स्थिति ही अधिक लाभकारी है, न कि वह वस्तु जिस पर तुम ध्यान लगाते हो।

१३१. ध्यान ही सारी आध्यात्मिक साधनाओं का प्राण एवं सर्वस्व है।

१३२. अपने ध्यान में नियमित होओ।

१३३. ध्यान का अभ्यास तब तक करो, जब तक पूर्णता की प्राप्ति न हो, जब तक लक्ष्य प्राप्ति न हो जाय।

१३४. ध्यान करो। साक्षात्कार करो। संसार को घोषित करो कि मैं अविनाशी अमर आत्मा हूँ। मैं आत्म-सम्राट हूँ। मैं राजाओं का राजा हूँ।

(ङ) महत्वपूर्ण लक्ष्य

१३५. सहज समाधि ही तुम्हारा केन्द्र, जीवन, आत्मा तथा लक्ष्य है।

१३६. ईश्वरीय कृपा आत्म-समर्पण की स्थिति का समानुपात है।

१३७. प्रतिबोधविदितं ज्ञान ही पूर्ण की अपरोक्षानुभूति है।

१३८ समाधि अथवा ईश्वरीय-सान्निध्य में सारी कामनायें शान्त हो जाती हैं। सारी ध्वनियां निस्तब्ध हो जाती हैं। तब अविच्छिन्न शान्ति रहती है।

१३९. समाधि आध्यात्मिक पुनर्जन्म है। यह अमर जीवन है।

१४०. प्रथमतः अपरोक्षानुभूति की झलक होती है। तत्पश्चात् पूर्ण प्रकाश की प्राप्ति होती है।

१४१. निर्विकल्प समाधि में मन पूर्णतः दग्ध हो जाता है।

१४२. ब्रह्म में निमग्न रहना, अमरात्मा से तादात्म्यता का बोध करना ही तुरीय या निर्विकल्प समाधि है।

१४३. आध्यात्मिक ज्ञान अविच्छिन्न अनुभूति है। यह पूर्णानुभूति है।

१४४. समाधि सर्वोत्तम तप है। यह सतत तप है। यह महत्वपूर्ण, स्वर्गिक तथा उत्कृष्ट तप है। यह तपों का तप है।

१४५ स्मृति मानसिक प्रक्रिया है। इससे सुख-दुःख की अनुभूति होती है। समाधि में जाने से पहले इसका दमन करना आवश्यक है।

१४६. एकरसता का भान ही समाधि है।

१४७ समाधि में क्रमगत आध्यात्मिक अनुभव नही होते। सभी चीजों की एक साथ ही अनुभूति होती है।

१४८. ऐसे भी असाधारण उदाहरण पाये हैं, जिन में अचानक ज्ञानालोक की अनुभूति हुई तथा तत्क्षण सारा जीवन ही परिवर्त्तित हो गया।

१४९ वैज्ञानिक प्रयत्नों द्वारा असीम में प्रवेश पाना निरर्थक होगा। अपरोक्षानुभूति ही इसका एकमात्र वैज्ञानिक साधन है।

१५०. अन्तचक्षु का विश्वास करो।

१५१ दृढ़ता पूर्वक इस आस्था को जमाओ कि "मैं अमर आत्मा हूं।" आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करो।

१५२. सर्वव्यापक आत्मा के साथ अपना तादात्म्य स्थापित करो। एकरसता एवं एकता का जीवन यापन करो।

१५३. ऐ साधक ! जब तक तुम शरीर-भाव को वशीभूत नहीं करते, तब तक तुम उस परमात्मा अथवा अनन्त का साक्षात्कार नहीं कर सकते।

१५४. तुम को अपनी सारी संकीर्णताओं का अतिक्रमण करना होगा और सत्व, भक्ति, मुमुक्षत्व तथा ध्यान के द्वारा उस परम सत्ता का साक्षात्कार करना होगा।

१५५. मन तथा बुद्धि का अतिक्रमण करो।

१५६. "मैं सभी शरीरों में आनन्द का उपयोग करता हूँ। मैं सभी शरीरों में दुःख का अनुभव करता हूँ। मैं सभी नेत्रों के सहारे देखता हूं। मैं सभी हाथों से कार्य्य करता हूँ।" यही सन्त अथवा वेदान्ती की भावना होती है।

१५७. सन्त पुरुष सभी दशाओं, वातावरण एवं परिस्थितियों में अचल एवं अनुद्विग्न रहता है; क्योंकि वह अपने सच्चिदानन्द-स्वरूप में निवास करता है।

१५८. हे राम ! वह ज्योति भीतर है। उसे प्रभासित होने दो।

१५९. अपरोक्ष निस्तब्धता में शान्ति पूर्वक निवास करो।

(च) सफलता का रहस्य—साधना

१६०. गहन योग-साधना करो। सच्चे बनो। धीर बनो। विजय तुम्हारी ही होगी।

१६१. अविराम बढ़ते जा। प्रयास कर। प्रयास कर। ध्यान लगा। ध्यान लगा। प्रगतिशील बन हे, वीर !

१६२. परिश्रमी बनो। साधना में लगे रहो। व्यर्थ की बातें, गप्प तथा निन्दा करना बन्द करो। अपने समय की बचत करो।

१६३. श्रद्धा एवं साधनों के द्वारा आध्यात्मिक मार्ग की सारी वाधाओं को दूर करने में तुम समर्थ हो सकोगे।

१६४. उत्तिष्ठ। ऐ वीर! ऐ सत्य के उपासक! जीवन ही युद्ध-भूमि है। बहादुरी के साथ युद्ध करो।

१६५. बाधाओं पर विजय पाओ। अपने को वीरतापूर्वक अग्रिम क्षेत्र में रखो। अन्तरतम से आध्यात्मिक साधनों में पिल पड़ो।

१६६. दूसरे लोग क्या कहते हैं, अथवा क्या सोचते हैं इसकी चिंता न करो। सत्य पर टिके रहो। शुद्ध विवेक के साथ सुखपूर्वक भ्रमण करो।

१६७. जप, कीर्त्तन, ध्यान में नियमित रहो। तुम नवस्फुर्ति, नवजीवन, नवचेतना, नवीन उत्साह एवं उमङ्ग का भान करोगे।

१६८. मुमुक्षु को आत्मनियन्त्रण का अभ्यास करना चाहिए।

१६९. सारी संकीर्णताओं को ध्वस्त कर डालो। बेड़ियों को तोड़ डालो।

१७०. बुद्धि, हृदय एवं कर्म इन तीनों का सम-रूप से विकास करो।

१७१. उठ पड़ो। यह ब्रह्म मुहुर्त्त है। हर जगह शान्ति है। प्रकृति स्वयं शान्त है। इस समय तुम अपने हृदय के अन्तरतम प्रकोष्ठों में प्रविष्ट हो सकते हो।

१७२. उस भगवान का सतत स्मरण करो, जिसने तुम्हें बुद्धि दी है तथा जो तुम्हारे अस्तित्व का कारण है। आत्म-नियन्त्रण एवं आत्मसंयम का जीवन व्यतीत करो। तुम शीघ्र ही ईश्वर से ऐक्य स्थापित करोगे।

१७३. सुनो ! दुन्दुभि बज उठी । बद्ध-परिकर हो जाओ । प्रयास करो । परिश्रम करो । आत्मशुद्धि करो । मन तथा इन्द्रियों का नियन्त्रण करो । ध्यान करो और अमर-धाम की प्राप्ति करो ।

१७४. ईश्वर के लिए अन्तरतम मांग होनी चाहिए । तुम्हें आध्यात्मिक क्षुधा होनी चाहिए । तभी ईश्वर अपनी कृपा से तुम्हें परिपूर्ण करेगा ।

१७५. लक्ष्य-प्राप्ति के लिये जितनी ही उत्कट अभिलाषा होगी, उतनी ही जल्दी तुम उस ओर प्रगतिशील हो सकोगे ।

१७६. जब स्वार्थपरता का विनाश हो जाता है तब आध्यात्मिक शक्ति एवं ईश्वरीय कृपा का संचार अबाध गति से तुम्हारे हृदय में होने लगेगा ।

१७७. शिशुवत् बनो, तभी ईश्वरीय ज्योति तथा कृपा का प्रादुर्भाव होगा ।

१७८. ईश्वरीय ज्योति एवं कृपा का प्रादुर्भाव सात्विक एवं शुद्ध मन पर ही होगा क्योंकि केवल शुद्ध मन ही इसको प्राप्त कर सकता है ।

१७९. शिशुवत् शुद्ध, निर्दम्भ, सरल एवं निरहङ्कार बनो ।

१८०. सरल, साधारण, शिशुवत्, सुकर्मी, दानी एवं उदार बनो । इससे तुम दिव्य हो जाओगे ।

१८१. अपने हृदय को शान्त, शुद्ध, निष्काम एवं निर्विचार बनाए रखो । तभी तुम पर ईश्वरीय ज्योति तथा कृपा का संचार होगा ।

१८२. जितना ही अधिक तुम अपने हृदय के अन्तरतम को वैराग्य एवं ध्यान के द्वारा चमत्कृत करोगे, उतना ही अधिक ईश्वरीय कृपा-ज्योति वहां ज्योतित होगी।

१८३. ईश्वरीय कृपा ही काम, क्रोध एवं मोह का मूलोच्छेदन कर सकती है।

१८४. ईश्वरीय कृपा की अल्प बूँदें ही महत्तम सम्पत्ति हैं।

१८५ शिक्षा के द्वारा नहीं, वरन् भक्ति के द्वारा ही ईश्वरीय कृपा की प्राप्ति होती है।

१८६. ईश्वरीय कृपा आत्म-समर्पण का परिणाम है।

हिमालय के अंचल से

द्वितीय खण्ड : प्रथम परिच्छेद

तुम्हारा परम लक्ष्य—ईश्वर

——:❀००❀:——

(क) ईश्वर के गुण

(ख) तुम्हारे ही भीतर उसका वास है

(ग) परम सत्य

(घ) ब्रह्म के गुण

(ङ) उसी की खोज करो

(क) ईश्वर के गुण

१. वह संसार, वेद तथा सभी चीजों का उद्गम है।

२. वह सर्वव्यापक, सर्वगम्य, सबों में ओतप्रोत है।

३. वह प्रेम, ज्ञान एवं आनन्द का प्रतिरूप है।

४. वह मन, बुद्धि तथा इन्द्रियों को शक्ति तथा प्रकाश प्रदान करता है।

५. वह सबों में है। उसमें सभी चीजें स्थित हैं। वह सर्वोपरि है। वह सभी में रमा हुआ है।

६. सारी विनश्वर चीजें छायामात्र है। ईश्वर ही एक वास्तविक अमर सत्ता है।

७. शान्ति, ईश्वर, आत्मा, ब्रह्म, अमर, मुक्ति; ये सब पर्य्यायवाची शब्द हैं।

८. ब्रह्म सचेत गतिशील तथा सभी वस्तुओं का उद्गम तथा आश्रय स्वरूप है।

९. ब्रह्म इस जगत् के संचालन का ही कारण नहीं, वरन् उसका भौतिक कारण भी है।

१०. ब्रह्म अथवा चिरन्तन सत्य में जातिगत भिन्नतायें अथवा शरीरगत बाहुमुल्य एवं अन्तर्गत विभिन्नतायें नहीं हैं।

११. परम पुरुष अपरिभाष्य है। यद्यपि विद्वान लोग इसकी बौद्धिक व्याख्यायें देते हैं, परन्तु वे परम सत्य नहीं।

१२. ब्रह्म दार्शनिक वस्तु नहीं है। वह पूर्ण तथा परम सत्य है।

१३. उसमें भावनाओं का व्यक्तिकरण नहीं है। वह अनुभव ज्ञानरहित, रुचिरहित, कामसम्बन्धी इच्छारहित तथा रागसम्बन्धी भावनारहित है।

१४. ईश्वर अपरोक्ष रूप से विचार करता है। वह सभी चीजों को एक बार में ही देखता है। वह सबों को पूर्णतः देखता है।

(ख) तुम्हारे ही भीतर उसका वास है

१५. वह करुणानिधान भगवान् ही मन, बुद्धि तथा इन्द्रियों का संचालक है। वही अन्तर्यामी है। वही आभ्यन्तरिक शासक है। उसे जानो और मुक्त हो जाओ।

१६. ईश्वर परिपूर्ण है। वह आत्मतुष्ट है। वह नित्य संतुष्ट है।

१७. यह जग ईश्वर से व्याप्त है। वह इस जगत का आत्मा है। वह विश्व का आत्मा है।

१८. ईश्वर तुम्हारे हृदय में निवास करता है। वह तुम्हारे सारे विचारों का निरीक्षण करता है। अतः तुम उसे धोखा नहीं दे सकते।

१६. ईश्वर ही तुम्हारी घ्राणेन्द्रिय से होकर स्वास रूप में संचरित होता है। वही तुम्हारी नेत्रों की ज्योति है।

२०. ईश्वर ही आनन्द बल, शान्ति तथा आनन्द का उद्गम है।

२१. शक्ति, सौन्दर्य, यश, ऐश्वर्य, बल, धैर्य्य आदि सभी ईश्वर के ही प्रतिरूप है।

२२. ईश्वर स्वेच्छाचारी नहीं है। वह संसार का अत्याचारी शासक नहीं है। वह तुम्हारा प्रिय पिता, स्नेहमयी माता तथा अमर मित्र है।

२३. ईश्वर ही प्रेम है! प्रेम ही ईश्वर है।

२४. वह मधुरतम वस्तुओं से भी मधुर है। वह दुग्धमय, प्रेममय तथा माधुर्य्यमय है। वह अमृत का अन्तर्मुखी स्रोत है।

२५. मिश्री से भी अधिक मधुर, सूर्य्य से भी अधिक प्रभासमान ईश्वर है।

२६. आम मधुर होता है। सुचरित्र मनुष्य मधुर होता है। पर ईश्वर का माधुर्य तुम्हारी सारी कल्पनाओं से परे है।

२७. जिसने अपने अहङ्कार अथवा भ्रामक व्यक्तित्व का नाश कर दिया है, वह अन्तर की आवाज सुनने में समक्ष है।

(ग) परम सत्य

२८. ईश्वर ही सत्य है। सत्य ही ईश्वर है।

२९. सत्य ही ईश्वर अथवा ब्रह्म है। जिसका अस्तित्व भूत, वर्तमान तथा भविष्य में सनातन है तथा जो अपरिवर्त्तन-शील और अविनाशी है, वही सत्य है।

३०. सत्य अनन्त है। सत्य परम है। सत्य अमरत्व है, चिरन्तन है।

३१. सत्य ब्रह्म है। सत्य का अस्तित्व आज भी उसी प्रकार का है जैसा कि लाखों वर्ष पहले था और जैसा कि लाखों वर्ष बाद होगा। यही सत्य की पहचान है।

३२. सत्य गहन है। सत्य चिरन्तन है, निमित्त तथा अनवरत ध्यान के द्वारा ही सत्य का अनुभव किया जा सकता है। इस सत्य का साक्षात्कार करो और मुक्त हो जाओ।

३३. सत्य अमर जीवन तथा अस्तित्व है। सत्य ही शान्ति है। सत्य ही अमरत्व है।

३४. शब्दों में परिवर्तन हो सकते हैं, परन्तु सत्य सदैव चमकता रहता है।

३५. सत्य के द्वारा ही मनुष्य जानने का प्रयास करता है।

३६. प्रतिबोध अथवा अपरोक्षानुभूति के द्वारा सत्य को जाना जाता है।

३७. आनन्द, शान्ति, सत्त्व, साहस, चैतन्य तथा ज्ञान के द्वारा ही सत्य अथवा ईश्वरत्व का निर्माण हुआ है। ऐ राम! अपने को उस ईश्वरीय पदार्थ अथवा तत्व रूप में जानो।

३८. सत्य असीम है।

३९. सत्य चिरन्तन है। असीम ही अमरत्व है।

४०. अनन्त अविभाज्य सत्ता है।

४१. सत् ही परम सत्य अथवा ब्रह्म है।

४२. परम सत्य को पार्थिव रूप में लाकर बोधगम्य किया जाता है।

४३. सत्य ही सत्य का धाम है। सत्यमायतनम्।

४४. सत्य सरल है। सत्य सरलतम रूप में ही अपना व्यक्तिकरण करता है।

४५. सत्य ब्रह्म है। सत्य का साक्षात्कार उसे ही होता है, जो उसे खोजता और उससे प्रेम करता है।

(घ) ब्रह्मानन्द के गुण

४६. ब्रह्मानन्द अतर्क्य है। चिन्तन के द्वारा उसका ज्ञान नहीं किया जा सकता।

४८. परमात्मा न तो ज्ञानगम्य है और न ज्ञान का विषय है। वह शुद्ध चैतन्य है।

४९. शुद्ध चैतन्य सदा एक है। वह सदैव अद्वैत है। वह अमर है। हम दो प्रकार की चेतनाओं का भान नहीं कर सकते।

५०. ब्रह्म अथवा परमात्मा अचेतन नहीं है। वह स्वयं चैतन्य ही है। ब्रह्म सास्तित्व नहीं वह स्वयं अस्तित्व ही है। ब्रह्म सानन्द नहीं वह स्वयं आनन्द ही है।

५१. शुद्ध एवं परम चैतन्य ही ब्रह्म अथवा परमात्मा है।

५२. ब्रह्म अथवा परमात्मा पूर्णतः समत्व रूप है।

५३. चैतन्य ब्रह्म का गुणवाचक नहीं।

५४. ब्रह्म विचारशील सत्ता नहीं, शुद्ध चैतन्य है।

५५. शुद्ध चैतन्य ही ब्रह्म है। व्यक्तिगत अहङ्कार चैतन्य ब्रह्म नहीं।

५६. ब्रह्म परम सत्य है। परम सत्य किसी चीज को जानने अथवा करने की आवश्यकता नहीं रखता।

५७. शान्ति, पूर्ण शान्ति, परम शान्ति, अविच्छिन्न शान्ति ही उस परमात्मा के गुण हैं।

५८. ब्रह्म अपरोक्षानुभूति अथवा शुद्ध ज्ञान का साम्राज्य है।

५९. ज्ञान ब्रह्म अथवा परमात्मा का गुण नहीं, वह तो उस सत्य का मूल तत्व है।

६०. अनन्त अथवा ब्रह्म निष्काम है। ब्रह्म नित्यशुद्ध है।

६१. नास्तिक मनुष्य ईश्वर का अस्तित्व नहीं मानता। परन्तु उसका अपना अस्तित्व है। अस्तित्व ही ईश्वर अथवा ब्रह्म है।

६२. ब्रह्म अथवा परमात्मा स्वस्वरूप में है। इस स्वत्व में विभिन्नता अथवा विच्छिन्नता नहीं पाई जाती। यह स्वत्व अनन्त एवं एकरस है।

६३. ब्रह्म जाति, वर्ण, देशगत विभिन्नता नहीं।

६४. आत्मा ही परम चैतन्य अथवा भूमा है।

६५. अस्तित्व और चैतन्य दोनों एक ही हैं। चैतन्य का अस्तित्व ही वास्तविक अस्तित्व है।

६६. सत्ता ही अस्तित्व की परिपूर्णता है।

६७. आत्मा चैतन्य में कर्मबाध्य नहीं; क्योंकि आत्मा अद्वैत है।

६८. चैतन्य अविच्छेद्य एवं एक रस है।

६९. परमात्मा स्वयं प्रकाश, अद्वैत, स्वयं चैतन्य तथा स्वातन्त्र्य है।

७०. सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म।

७१. सच्चिदानन्द ब्रह्म।

७२. सत्यं ज्ञान अनन्तं आनन्दं ब्रह्म।

७३. प्रज्ञानं ब्रह्म।

७४. अभयम् ब्रह्म।

७५. खं (आकाश, आनन्द) ब्रह्म।

७६. विज्ञान आनन्द ब्रह्म।

७७. शुद्धानुभूति को ही परम चैतन्य कहते हैं।

७८. परम सत्य केवल एक है। इसमें द्वैत नहीं।

७९. गुणानन्द करने वालों की संकीर्णताओं से ब्रह्म मुक्त है।

८०. ब्रह्म ही से इस जगत् की सृष्टि, पालन एवं संहार का प्रारम्भ होता है।

८१. परम सत्य भावना अथवा दार्शनिक कल्पनामात्र नहीं है।

८२. ब्रह्म, परमात्मा अथवा निर्विकल्प समाधि की स्थिति को शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता। भाषा अपूर्ण अथवा सीमित है।

८३. ब्रह्म अथवा परमात्मा उन्नति अथवा अवनति से परे है।

८४. जानने के विशेष तरीकों से परे होते हुए भी परमात्मा अपने को जानता है।

८५. वह परमात्मा समय और स्थान से परे है। वह सभी प्रकार के परिवर्त्तन एवं सम्बन्धों से परे है तथा सभी प्रकार की विभिन्नताओं एवं सीमाओं से अतीत है।

८६. उसके भीतर अथवा बाहर कुछ भी नहीं है।

८७ अपने अस्तित्व के व्यक्तीकरण के लिए वह कोई कारण अथवा विशेष परिस्थिति पर अवलम्बित नहीं होता।

(ङ) उसी की खोज करो

८८. आत्म-साक्षात्कार रूपी आध्यात्मिक सम्पत्ति हीरे एवं सोने की बहुत सी खानों से भी बहुमूल्य है।

८६. उसी में तुम चिरन्तन सुख, अनन्त शान्ति, नित्य आनन्द, अमरत्व एवं अमर जीवन की प्राप्ति कर सकते हो।

६०. अतः सत्य, निष्काम सेवा, श्रद्धा, भक्ति तथा ज्ञान के द्वारा उसकी खोज करो और उसको प्राप्त करो।

६१. आत्म-साक्षात्कार की प्राप्ति इसी क्षण में की जा सकती है।

६२. तुम्हारा एकमात्र कर्तव्य ईश्वर का साक्षात्कार करना है।

६३. आत्मसाक्षात्कार के विषय को वृद्धावस्था के लिये स्थगित नहीं किया जा सकता। शीघ्रातिशीघ्र ध्यान देने योग्य यह अत्यन्त आवश्यक विषय है।

६४. पूर्णता की प्राप्ति ही मानव जीवन का लक्ष्य है।

६५. उसका साक्षात्कार करो। तुम सब कुछ पा जाओगे। उसके बाद तुम्हें किसी चीज का अभाव नहीं होगा।

६६. आत्म-साक्षात्कार कायर एवं दुर्बल जनों के लिए नहीं, वरन वीर, साहसी एवं बली मनुष्यों के लिए है।

६७. धार्मिक बनो और इसी जन्म में ईश्वर का साक्षात्कार करो।

६८. ईश्वर-प्राप्ति का कोई संक्षिप्त मार्ग नहीं।

६६. ओ यात्री! आज से ही अपनी यात्रा का प्रारंभ करो। अंतरतम से प्रार्थना करो। सतत ईश्वर को याद करो। तुम अवश्य ही परम धाम को प्राप्त करोगे।

१००. संसार-मरुस्थल के उद्भ्रान्त पथिक! सारी मृगतृष्णाओं एवं प्रलोभनों से सावधान! सीधे अपने लक्ष्य की ओर प्रयाण करो।

१०१. ऐ मनुष्य! तुम यहाँ एक यात्री हो। जीवन अल्प है। समय गतिशील है। —— ——

ज्ञान का उद्गम—वेद

द्वितीय खण्ड : द्वितीय परिच्छेद

ज्ञान का उद्गम्—वेद

(क) उपनिषदों का ज्ञान

(ख) वेदान्त-संदेश

(ग) इसे जानो और मुक्त हो जाओ

(घ) आंतरिक शत्रु

(ङ) आनन्द की ओर

(क) उपनिषदों का ज्ञान

१. दिव्य-ज्ञान उपनिषदों में ही पाया जा सकता है। उपनिषद् उच्चतम् ज्ञान रूपी सनातन निर्झर का उद्गम् है।

२. उपनिषद् अमरत्व की सांस है। यह एक प्रगटीकरण है। जिससे यह एक सनातन प्रेरक है!

३. उपनिषद् भारत की प्राणवायु ही है। ये अमर एवं अपरोक्षानुभूत प्रगटीकरण हैं।

४. उपनिषद् ज्ञान-मार्ग को ज्योतिर्मय करता है तथा जिज्ञासु को ज्ञान की सीढ़ी के उच्चतम् स्तर की ओर पथ-प्रदर्शन करता है।

५. उपनिषदों का वेदान्त सजीव धर्म है। यह शब्द-जाल मात्र नहीं है।

६. वेदान्त स्वयं जीवन की एक प्रणाली है। यह उस मौलिक आधार का प्रतिनिधित्व करता है, जिसके ऊपर विश्व धर्म अथवा विश्व-धर्म-संघ का निर्माण किया जा सकता है।

७. सभी प्राप्य उपनिषदों में वृहदारण्यक उपनिषद् प्राचीनतम है। इसमें आध्यात्मिक ज्ञान के बहुत से कोष संचित हैं।

८. भारत का जीवन आज भी वेदान्त की ही शक्ति पर आधारित है।

९. वेदान्त अद्वैत दर्शनवाद है। यह इसकी शिक्षा देता है कि ब्रह्म, जो दृष्टिगत जगत का आधारभूत वास्तविक सत्य है, वह एक है।

१०. औपनिषदिक ज्ञानलोक के सहारे नित्य सुख एवं अमरत्व के साम्राज्य की ओर बढ़ते जाओ। उपनिपद-दर्शनवाद ही जीवन की एक मात्र विश्रान्ति है।

११. विज्ञान दृश्य-पदार्थों का विश्लेषण करता है। उन्हें श्रेणी-बद्ध करता है तथा उनकी व्याख्या करता है। परन्तु ब्रह्म-विद्या जो आत्म-विज्ञान है, तुम्हें दृश्य-जगत् से परे ले जाकर अमरत्व प्राप्त करने की शिक्षा देती है।

१२. उपनिषद् वैयक्तिक बुद्धि अथवा मन की उपज नहीं हैं। ये अपरोक्षानुभूतियां हैं।

१३. उपनिषदों में वैदिक शिक्षाओं का सार है।

१४. उपनिषद् वेदों के उपसंहार में लिखे गये हैं, इसीलिये इन्हें वेदान्त अथवा वेदों का अन्त कहा जाता है।

१५. उपनिषद् पर ही हिन्दू-सभ्यता टिकी हुई है।

(ख) वेदान्त–सन्देश

१६. इसे जानो कि तुम अनन्त, अपरिवर्त्तनशील और सर्व-व्यापी आत्मा हो।

१७. आत्मा शुद्ध चैतन्य, स्वयं ज्ञान एवं स्वयं आनन्द है।

१८. सारांशतः तुम शुद्ध आत्मा हो। कामना, दुर्बलता तथा अपूर्णता तुम्हें स्पर्श तक नहीं करती। तुम शरीर नहीं हो। तुम मन नहीं हो।

१९. दृश्य जगत में ब्रह्म तथा सत्य का ही निवास है।

२०. सभी वस्तुओं का उद्गम ईश्वर, ब्रह्म अथवा परमात्मा ही है।

२१. अवशेष (नेति-नेति अभ्यास के बाद का) ही ब्रह्म है।

२२. मैं, मेरा, वह, तुम, मेरा और तेरा, यह, वह, यहाँ, वहाँ ये सब वास्तव में निरर्थक हैं। परमात्मा ही एकमात्र सत्य है। केवल उसी का अस्तित्व है।

२३. आत्मा के साथ एकता का साक्षात्कार करो। यही जीवन का अन्तिम लक्ष्य है।

२४. ब्रह्म ही सत्य, जीवन का सुख, मन का आनन्द, शान्ति की परिपूर्णता, तथा अमर है।

२५. जागो ! अज्ञान की प्रगाढ़ निद्रा से जग पड़ो । ः साक्षात्कार करो और मुक्त हो जाओ । यही उपनिषद सन्देश है ।

२६. तुम को आत्मा बनने में प्रयत्न की आवश्यकता न तुम तो स्वयं आत्मा हो । तुम्हें केवल इसका ज्ञान करना चाहिये ।

२७. बाह्य अहंकारजन्य व्यक्तित्व, जो यह बतलाता है कि ' अमुक व्यक्ति हूँ । मैं चिकित्सक हूँ, मैं लम्बा हूँ" की उपे करो और इसका ज्ञान प्राप्त करो कि "मैं सर्वव्य आत्मा हूँ ।"

२८. वास्तविक स्वतन्त्रता की संस्थापना तब होगी, जब रा वादिता, पूँजीवाद तथा सैन्यवादिता का विनाश हो जाय और जीवन की अनन्यता के वेदान्तिक आदर्श के आधा पर मानववादिता उनके स्थानों को ग्रहण कर लेगी ।

२९. ब्रह्म में अपनी जड़ कायम करो । समदर्शिता का विकास करो । तुम जीवनमुक्त के रूप में सुशोभित होगे ।

३०. आत्म-स्वराज्य अथवा आत्म-साक्षात्कार की अमर पैतृक सम्पत्ति का अधिकार प्राप्त करो ।

३१. संगठित होओ ! क्योंकि उस आत्मा में महान् ऐक्य है जिसमें सभी प्राणी ग्रथित हैं

३२. उपनिषद् स्पष्ट शब्दों में यह घोषित करते हैं कि मनुष्य सारांशतः स्वयं ब्रह्म ही है ।

३३. वेदान्त बहुईश्वरवादी नहीं है वह एक ही अद्वैत सत्ता ब्रह्म का निरूपण करता है।

३४. मौत का अस्तित्व नहीं! इसी मौलिक संदेश को वेदान्त घोषित करता है।

३५. परम शुद्ध चैतन्यघन से एकता की प्राप्ति करना ही वेदांतिक धर्म का एकमात्र उद्देश्य है।

३६. वेदान्त सर्वात्मभाव अर्थात् आत्मा ही सब कुछ है, इस भाव को प्राप्त करने की शिक्षा देता है।

३७ ब्रह्म का जीव के अन्दर साक्षात्कार करना ही वेदान्त का धर्म है।

३८. वेदान्ती नाम-रूपों की उपेक्षा करता है और सबों में एक आत्मा के ही दर्शन करता है।

३९. वेदान्त हृदय का धर्म है।

४०. वेदान्त एकता के धर्म की शिक्षा देता है।

४१. वेदान्त अन्तिम सत्य है।

४२. आत्म साक्षात्कार से ही नित्य संतुष्टि, चिरंतन शांति तथा अमर आनंद की प्राप्ति होगी।

४३. वेदान्त में धर्मान्धता, त्यौहार तथा कर्मकांड नहीं हैं। वह वास्तविकता का परम विज्ञान है।

४४. वेदान्त जोरदार शब्दों में इसकी घोषणा करता है कि सारांशतः तुम अमर सर्वव्यापक आत्मा हो।

४५. तेरे लिये मेरा एक ही संदेश है—इसका सतत स्मरण करो कि तुम सर्वव्यापक अमर आत्मा हो।

(ग) इसे जानो और मुक्त हो जाओ

४६. आत्मा ही एकमात्र सत्य है। यही प्रत्येक वस्तु
आभ्यंतरिक सत्ता अथवा अंतरतम मौलिकता है।

४७. परमात्मा ही सब को देखता है, परन्तु वह देखा न
जाता। केवल वही सुनता है, परन्तु वह कर्णगोचर नह
होता। केवल वही विचारता है, परन्तु वह विचार
आने योग्य नहीं। उसे जानो और मुक्त हो जाओ।

४८. सारांशतः तुम वही आध्यात्मिक सत्ता हो। जि
सच्चिदानन्द तत्व से ब्रह्म का निर्माण हुआ है, उसी तत्व
से तुम भी निर्मित हुए हो।

४९. हृदयाकाश में वह सबों का सम्राट, सबों का स्वामी, सबों
का अधिपति, सबों का शासक, सबों का रक्षक परमात्म
निवास करता है। उसका साक्षात्कार करो और सुखी ह
जाओ।

५०. ब्रह्म अथवा परमात्मा के ऊपर इस जगत का अध्या
होता है। अध्यस्त वस्तु अपनी सत्ता अधिष्ठान के द्वा
कायम रखती है। इसका अधिष्ठान से भिन्न को
अस्तित्व नहीं।

५१. महत्तम लक्ष्य क्या है? धन, पद शक्ति तथा पदवि
प्राप्त करना परम लक्ष्य नहीं। तब फिर वह है क्या? व
आत्मज्ञान अथवा आत्मसाक्षात्कार ही है।

५२. जीवात्मा और परमात्मा दोनों में तादात्म्य सम्बन्ध है

यही उपनिषदों का प्रमुख उद्देश्य है।

५३. परम ऐक्य की स्थिति में भाग्य का कोई अस्तित्व नहीं, वहां कर्म नहीं। बाधाएं नहीं, और किसी प्रकार का विघ्न नहीं।

५४. जो कुछ भी है वह वास्तव में एक ही है। केवल एक ही विश्वव्यापी सत्ता परमात्मा का ही अस्तित्व है।

५५. जहां द्वैत नहीं, वहां भय नहीं, वहां रोग नहीं, वहां मृत्यु नहीं।

५६. जहां न 'मैं' है न 'तुम' और न 'वह' वहीं परमात्मा अथवा ब्रह्म का वास है।

५७. इसका भान करो कि यह आत्मा दुःख, दर्द तथा शरीर और मन की व्याधियों से निर्लिप्त है। वह मूक साक्षी-मात्र है।

५८. आत्मा स्वयं संतुष्ट, परिपूर्ण तथा स्वयं सत् है।

५९. आत्मा महान ऐक्य है। वह परम स्वतंत्रता है।

६०. आत्मा सभी आनन्दों का अजस्र स्रोत है। अन्तःदर्शी बनो और अपनी आत्मा में ही सदा संतुष्ट रहो।

६१. इसका ज्ञान प्राप्त करना कि "जीवात्मा और परमात्मा एक ही है" सर्वोत्तम पूजा है।

६२. आत्म-विषयक बातों का श्रवण करो। तब उन पर मनन करो। फिर आत्मा पर निदिध्यासन अथवा ध्यान करो। तत्पश्चात् आत्म-साक्षात्कार करो। तत् त्वम् असि—तुम वही हो।

६३. तुम सारांशतः जन्मरहित, मृत्युरहित, निरामय, अक्षर तथा अपरिवर्त्तनशील हो। तुम्हारा वास्तविक स्वरूप आनन्द, अमर, सर्वव्यापक तथा अनन्त है।

६४. एक एक कर आवरणों का अतिक्रमण करो। स्वयं प्रकाश आत्मा अपनी रश्मियां विकीर्ण कर रहा है। तुम वही आत्मज्योति हो।

६५. उस एक का ज्ञान प्राप्त करो। शरीराध्यास, डर, दुःख, संदेह तथा भ्रम समूल नष्ट हो जाएंगे।

६६. पार्थक्य-भावना का दमन करो। माया अथवा अविद्या की शक्ति का नाश करो और स्वतंत्र एवं सुखी हो जाओ।

६७. आत्मा सभी भूतों में समरूप चैतन्य है। चींटी की आत्मा, हाथी की आत्मा, राजा, किसान, संत एवं असंत सबों की आत्मा एक ही है।

६८. शरीर की ही मृत्यु होती है, आत्मा अथवा परमात्मा की नहीं। परमात्मा अमर है।

६९. आत्मा न तो जन्मता है, न मरता है और न इसमें कोई परिवर्त्तन ही होते हैं।

७०. मोक्ष उसी मनुष्य के हृदय में पाया जाता है, जो घृणा, काम, अहंकार, लोभ तथा कामनाओं से मुक्त है।

७१. ब्रह्मज्ञान समस्त संसार की बीज-स्वरूपा अविद्या अथवा भ्रांति जैसी सारी बुराईयों का समूलतः नाश करता है।

७२. आत्मा प्रियतम वस्तुओं से भी अधिक प्रिय है। यह

निकटतम से भी अधिक निकट है।

३. आत्मा के द्वारा वास्तविक आध्यात्मिक शक्ति तथा आत्म-ज्ञान के द्वारा अमरत्व की प्राप्ति करो।

४. मनोमय शरीर से ऊपर उठो। सभी भूतों में एक ही आत्मा के दर्शन करो तथा चिरंतन सुख एवं अमरत्व की प्राप्ति करो।

५. अपने अहंकार को त्याग कर ईश्वरत्व की प्राप्ति करो।

६. यहीं इसी क्षण आत्मा का साक्षात्कार करोगे।

७. इस शरीर में रहते हुए भी मनुष्य ईश्वर अथवा ब्रह्म बन सकता है।

८. आत्मा की अपरोक्षानुभूति अथवा ज्ञान के द्वारा ही परि-पूर्णता, स्वतंत्रता एवं मुक्ति की प्राप्ति होती है।

९. असत्य से संग-विच्छेद कर सत्य के साथ संग-संस्थापन करो। यही आत्म-साक्षात्कार करने का तरीका है।

८०. तुम ही आत्मा हो। आत्मा ही तू है। इसका साक्षात्कार करो और मुक्त हो जाओ। अपने वास्तविक स्वरूप की साक्षात्कार-प्राप्ति में तुम्हें कोई भी शक्ति रोक नहीं सकती।

८१. इस अहंकार-पट का अनावरण ही सारे शास्त्रों में प्रति-पादित आध्यात्मिक साधनाओं का मुख्य उद्देश्य है।

८२. इसका ज्ञान प्राप्त करो कि धन, विषयानन्द, शक्ति एवं शिक्षा ये सब बंधन हैं। यही ज्ञान।

८३. विचार करो और चिंतन करो। आत्मा अथवा स्वरूप का साक्षात्कार करो। तुम्हें यह ज्ञान होगा कि यह जीवन जाग्रत-स्वप्न है।

८४. वही जानता है, जो अपने भीतर ही अपने स्वरूप का साक्षात्कार करता है।

८५. चिरंतन एवं असीम परमात्मा के साथ अपनी अनन्यता का साक्षात्कार करो और इस प्रकार सारे दुःख, शोक, भय एवं मृत्यु का अतिक्रमण कर जाओ।

[घ] आंतरिक-शत्रु

८६. माया के सदृश कोई भी बंधन शक्तिशाली नहीं। और इस बंधन को विनष्ट करने में योग से बढ़ कर कोई शक्ति नहीं।

८७. कैसा विचित्र संसार है! कैसी शक्तिशाली माया है! पलमात्र में ही यह मनुष्य के विवेक पर आधिपत्य जमा कर उसे अज्ञान के गहन खड्ड में प्रक्षिप्त कर डालती है।

८८. आत्मज्ञान का न होना ही अज्ञान है। अपने दिव्य-स्वरूप की विस्मृति को ही अज्ञान कहते हैं।

८९. अज्ञान अथवा इस विनाशी शरीर का अविनाशी आत्मा के साथ भ्रामक तादात्म्य-संबंध-संस्थापन ही इस संसार की सारी विपत्तियों का कारण है।

९०. अविद्या द्वारा रचित 'मैं' 'तू' 'वह' 'इदम्' 'अयम्' आदिक सारे कल्पना-चित्र सदा से ही भ्रामक रहे हैं।

९१. मन की संकीर्णताओं को निकाल बाहर करो। ये संकीर्णतायें अविद्या अथवा अज्ञान की भ्रामक उपज हैं।

९२. अज्ञान ही विपत्ति, अशांति तथा विनाश का जनक है। स्वरूप-ज्ञान की प्राप्ति करो और सबों के साथ समत्वपूर्ण रहो।

९३. अविद्या ही अज्ञान-वृक्ष की जड़ है। यह राग-द्वेष द्वारा ही परिपुष्ट होती है।

९४. अहंकार का उत्सर्ग ही वास्तविक उत्सर्ग है।

९५. अहंकार के समूल विनाश के बिना सत्य का दर्शन अथवा ईश्वर का दर्शन असंभव है।

९६. अहंकार का उत्सर्ग करना वास्तव में बहुत कठिन है। अहंकार बना रहता है। अहंकार अपनी जड़ जमाये हुए है।

९७. यह अहंकार भ्रामक तथा अस्तित्वहीन है। यह मिथ्या छायामात्र ही है। यह मिथ्या प्रतिबिम्ब है। यह मृग-तृष्णा है। यह स्वप्नवत् है।

(ङ) आनन्द की ओर

९८. अपने को अहंकार से रिक्त करो; तभी तुम्हारा हृदय ईश्वरत्व से परिपूर्ण हो जायगा।

९९. तुम अनन्त का साक्षात्कार सिर्फ दार्शनिक तर्कों द्वारा नहीं कर सकते।

१००. साधनचतुष्टय द्वारा अपने को योग्य बनाओ। तब श्रवण, मनन और निदिध्यासन करो। तभी तुम पूर्णता का अनुभव अथवा आत्म-साक्षात्कार कर सकोगे।

१०१. ईश्वर मांग और मांगपूर्ति का विषय है। यौगिक महत्व-कांक्षाएँ भी उसी प्रकार की हैं।

१०२. ब्रह्म-विद्या की शिक्षा वेदान्त-कुशल छात्रों को ही देनी चाहिये। तभी यह सफल होगी।

१०३ सबों के प्रति प्रेम करो, क्यों कि सभी एक ही आत्मा के प्रतिरूप हैं।

१०४. किसी वस्तु-विशेष के प्रति जो तुम्हारा प्रेम है, वह ब्रह्म के प्रति तुम्हारे प्रेम का एक पहलू है।

१०५. कोई वस्तु इसीलिये प्रिय लगती है, क्योंकि आत्मा उसमें प्रतिबिंबित है।

१०६. अपने जीवन में प्रत्येक वस्तु के प्रति जो तुम्हारा प्रेम है, वह आत्मा के प्रति तुम्हारे प्रेम का प्रतिबिंब मात्र है।

१०७. मानवी प्रेम जो पत्नी का पति के प्रति होता है वह पति से संचरित होने वाले ईश्वरीय प्रेम का प्रत्युत्तर-स्वरूप हृदय-स्थित ईश्वरीय प्रेम का ही प्रतिबिम्ब मात्र है।

१०८ प्रेम और ज्ञान के डैनों के सहारे उड़ कर ब्रह्म के अमर-धाम को प्राप्त करो।

१०९. ज्ञान-योग सूक्ष्म विश्लेषणात्मक ज्ञान-पथ है।

११०. ज्ञान द्वारा तुम प्राणीमात्र की एकात्मकता का साक्षात्कार करोगे।

१११. ज्ञान स्वयं प्रगट है। इसकी शिक्षा नहीं दी जाती। यह अपने अंक में सभी वस्तुओं का आलिंगन करता है।

११२. मूल-कारण का ज्ञान प्राप्त करने का अर्थ सभी वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त करना है।

११३. प्रत्यक्षतः अथवा परोक्षतः मनुष्य का प्रत्येक पल सच्चिदानन्द की ओर निर्दिष्ट है।

११४. अमर जीवन शाश्वत एवं अविच्छेद्य है।

११५. अमरानन्द एवं चिरंतन शांति के धामों में प्रवेश पाने के लिये ज्ञान ही एक मात्र कुंजिका है।

११६. आत्म-नियंत्रण का अभ्यास करो। विरक्ति अथवा वैराग्य की साधना करो। नियमित ध्यान का अभ्यास करो। इसके द्वारा तुम सतत शांति एवं आनन्द के साम्राज्य में प्रवेश पाने में समर्थ हो सकोगे।

११७. मौन में ही शान्ति का निवास है। मौन ही यह ब्रह्म अथवा परमात्मा है।

११८. चिरंतन आभ्यंतरिक शांति की खोज करो जिससे तुम्हारे सारे दुःख दर्द विनष्ट हो जायेंगे तथा तुम अंतिम लक्ष्य की प्राप्ति करोगे।

योग का आधार

द्वितीय खण्ड: तृतीय परिच्छेद

योग का आधार

(क) पारमार्थिकता

(ख) सात्त्विकता

(ग) अहिंसा, सत्यम्, ब्रह्मचर्य

(घ) आदर्श चरित्र

(ङ) सद्गुण

(क) पारमार्थिकता

१. पारमार्थिकता ही सभी धर्मों की नींव है।

२. पारमार्थिकता ही ईश्वरीय मार्ग है।

३. आनन्द उसी के लिए है जो परमार्थी है।

४. पारमार्थिकता ही ईश्वर है।

५. पारमार्थिकता ही उत्तम है। यही सर्वोत्तम है।

६. धन, सौन्दर्य, सम्मान तथा युवावस्था ये सब विनष्ट हो जायेंगे; परन्तु परमार्थी जीवन एवं ज्ञान सदा अक्षय रहेगा।

७. परमार्थमय जीवन के प्रति प्रेम रखो।

८. सद्गुण का फल स्वरूप ज्ञान है।

९. वैसा ही आचरण करो, जैसा कि तुम दूसरों के द्वारा किया जाना पसन्द करते हो। यही सारे धर्मों का सारांश है।

१०. सद्गुण सुख की वृद्धि करते हैं और दुर्गुण दुःख को।

११. ईश्वर परम कल्याण है। कल्याणमय जीवन यापन करो।

१२. इस शरीर का अभिप्राय परमार्थ करना ही है। पारमार्थिकता इस समस्त संसार का अधिष्ठान है।

१३. जहाँ पारमार्थिकता है, वहाँ सत्य है। पारमार्थिकता के अभ्यास के द्वारा सत्य का साक्षात्कार करो।

१४. पारमार्थिकता मनुष्य की परम प्राप्ति है। यह संसार की महत्तम् सम्पत्ति है।

१५. परम कल्याणमय जीवन व्यतीत करना अपने को अनन्त में विलीन कर देना है।

(ख) सात्विकता

१६. सात्विकता ईश्वर-साक्षात्कार की प्रारम्भिक आवश्यकता है। अतः सात्विक बनो।

१७ आत्म-संयम में चारित्रिक बल का, वैराग्य में आध्यात्मिक प्रगति का तथा सात्विकता में ईश्वर-साक्षात्कार का रहस्य छिपा हुआ है।

१८, सात्विकता ईश्वरीय साम्राज्य की ओर जाने वाला पथ है। अतः विचार, वाणी एवं कार्य सबों में सात्विकता लाओ।

१६. मानसिक शुद्धि, मनन एवं निदिध्यासन से रहित सद्-ग्रन्थों का अध्ययन समय का अपव्ययमात्र है।

२०. विना हृदय की शुद्धि के ही वेदान्तिक ग्रन्थ, उपनिषद् एवं ब्रह्मसूत्रों का अध्ययन करने से न तो उनका तात्पर्य ही समझ में आता है और न उसका कोई सुपरिणाम ही होता है।

२१. ईश्वरेच्छा को जानने के लिए शुद्ध हृदय की आवश्यकता है।

२२. यदि तुम सबल बनना चाहते हो तो शुद्ध बनो।

२३. हृदय-शुद्धि न हो तो शारीरिक-शुद्धि अत्यन्त निरर्थक है।

२४. मानसिक-शुद्धि आत्मसाक्षात्कार के लिए बहुत ही महत्व की है।

२५. कामना-मुक्ति ही सात्विकता है।

२६. सात्विकता मोक्षभूमि के लिये अनुमति-पत्र है।

२७. सात्विकता योगों का सर्वोत्तम आभूषण है। यह संत क महत्तम भण्डार है। यह भक्त का सर्वोत्तम धन है।

२८. सिर्फ हृदय से शुद्ध मनुष्य ही ईश्वर-साक्षात्कार क सकते हैं।

(ग) अहिंसा, सत्यम्, ब्रह्मचर्य

२६. यदि तुम आध्यात्मिकता में सत्वर प्रगति चाहते हो त अहिंसा, सत्यम एवं ब्रह्मचर्य का पालन करो।

३०. यदि तुम अहिंसानिष्ठ हो तो तुमने सारे गुणों को प्राप्त कर लिया है।

३१. सत्याभ्यास के बिना तुम अहिंसा का पालन नहीं कर सकते।

३२. अहिंसा ही वह कीलिका है, जिसके चारों ओर सारे सद्गुण भ्रमण करते हैं।

३३. सिर्फ नुकसान न पहुँचाना ही अहिंसा नहीं। यह विश्व-प्रेम है।

३४. अहिंसा विश्व प्रेम है। अहिंसा वास्तविक उत्सर्ग है। अहिंसा ही क्षमा है। अहिंसा ही सच्चा बल है।

३५. सत्य ही ईश्वरीय साम्राज्य का प्रवेश द्वार है।

३६. सच्चाई से बढ़कर और कोई गुण नहीं।

३७. जनता द्वारा अनुमोदित न होने पर भी सत्य अपनी जगह स्थित रहता है।

३८. सच्चाई के साथ विचार करो। सच्चाई के साथ बोलो। सच्चाई के साथ जीवन यापन करो। सच्चाई के साथ कार्य करो।

३९. तुम्हारे विचार तुम्हारे शब्द के अनुरूप और तुम्हारे शब्द तुम्हारे कार्य के अनुरूप होने चाहियें।

४०. अपने दैनिक कार्यों एवं दूसरों के प्रति अपने व्यवहारों में सत्यवादिता एवं सत्याभ्यास के द्वारा सत्य की प्राप्ति करो।

४१. उन सन्तों के जीवन का अध्ययन करो जिन लोगों ने सत्य का जीवन यापन किया तथा उनसे प्रेरणा ग्रहण करो।

४२. ब्रह्मचर्य ही शरीर-निर्माण एवं आध्यात्मिक उत्थान का आधार है।

४३. योग एवं सारे तपों के मूल में ब्रह्मचर्य का ही निवास है।

४४. ब्रह्मचर्य के बिना तुम आध्यात्मिकता के उच्च शिखरों तक नहीं पहुँच सकते।

४५. ब्रह्मचर्य योग का व्यापक अंग है; यह ईश्वरीय ऐक्य एवं आनन्दमय समाधि के लिये अत्यन्तावश्यक है।

४६. कामुकता एक सृजनात्मिका शक्ति है।

४७. इस काम-शक्ति को उच्चतर आध्यात्मिक मार्गों की ओर प्रवृत्त करो। इसका उद्धर्वगमन होगा। यह ईश्वरीय शक्ति में परिणत हो जायगी।

४८. जब तक तुम आध्यात्मिक आदर्शों द्वारा अनुप्राणित नहीं हुये हो, तब तक इस कामुक प्रवृत्ति पर नियन्त्रण करना कठिन होगा।

४९. ब्रह्मचर्य के द्वारा काम का दमन करो।

(घ) आदर्श-चरित्र

५०. अपने संगियों के साहचर्य में जिन जिन गुणों का प्राकट्य किसी व्यक्ति में होता है, चरित्र उन सारे गुणों का वाचक है।

५१. चरित्र प्रत्येक में व्यापक है।

५२. शुद्ध एवं भद्रचरित्र अथवा सदाचार आध्यात्मिक जीवन का अनिवार्य अंग है।

५३. यदि आपके जीवन में नैतिक आदर्श एवं आध्यात्मिक तत्त्व की कमी है तो आपका जीवन बहुत ही दरिद्र बना रहेगा।

५४. चरित्र को सत्संग अथवा सज्जनों की संगति द्वारा प्राप्त करो। यही सबसे अच्छा तरीका है।

५५. अनुशासन से चरित्र की उत्पत्ति होती है, चरित्र से व्यक्ति में पूर्णता आती है और व्यक्ति के द्वारा राष्ट्र का निर्माण होता है।

५६. सौन्दर्य का रहस्य वस्त्राभूषण में नहीं, वरन् सुचरित्रता एवं सद्गुण-ग्रहण में ही छिपा हुआ है।

५७. चरित्र वह है, जैसे कि तुम हो और आदर वह है जैसा कि लोग तुम्हें सोचते हैं। सुन्दर चरित्र ही मनुष्य का सर्वोत्तम कोष है।

५८. तुम जिस प्रकार के विचार अपने मन में लाते हो अथवा जिस प्रकार के मानसिक चित्र एवं आदर्शों का निर्माण करते हो, उन्हीं के ऊपर तुम्हारा चरित्र निर्भर रहता है। व्यर्थ के विचारों का परित्याग करो।

५९. प्रथमतः अपने भीतर से अहं भावना का परित्याग करो। किसी के कष्ट पहुँचाने पर भी उसका प्रतिकार न करने का अभ्यास डालो।

६०. यदि तुम सदाचार के नियमों को नहीं जानते तो तुम चरित्र-निर्माण नहीं कर सकते।

६१. नैतिकता धर्म का प्रवेश-द्वार है। नैतिकता अमरानन्द का प्रवेश-द्वार है।

६२. इन्द्रिय-निग्रह द्वारा शान्ति तथा सुख की प्राप्ति होती है।

६३. जहाँ दयालुता, नम्रता तथा सात्विकता है, वहाँ आध्यात्मिकता उग आती है, साधुत्व चमकने लगता है, ईश्वरत्व का प्रादुर्भाव होता तथा पूर्णता स्वतः प्रगट हो उठती है।

६४. आज मनुष्य को अधिक पदवियों की नहीं, परन्तु चरित्र की आवश्यकता है, अधिक अध्ययन की नहीं, वरन् ज्ञान की आवश्यकता है।

६५. जो अपने चरित्र का सच्चा है, जो सात्विक तथा गुणवान है तथा जो सबकी निःस्वार्थ सेवा करता है, वह सभी का प्रिय होता है।

६६. जिसका चरित्र निष्कलंक है तथा जिसका आचार सुन्दर है, वही शीघ्रातिशीघ्र सत्य का साक्षात्कार कर सकता है।

६७. क्षमा सर्वोत्तम सद्गुण है, जिसकी छवि भक्त-हृदय में पूर्णरूपेण दृष्टिगत होती है।

६८. साहस और धैर्य ये दोनों गुण वास्तविक साधक में पाये जाते हैं।

६९. नम्रता सबसे बड़ा सद्गुण है। जिस समय तुम अपने को पूर्णतः नम्र समझते हो, उसी समय ईश्वर तुम्हारी सहायता करता है।

७०. नम्रता कायरता नहीं है। सरलता दुर्बलता नहीं; नम्रता और सरलता वास्तव में आध्यात्मिक शक्तियाँ हैं।

७१. धैर्य को ही अपनी शक्ति बनाओ।

७२. दृढ़तापूर्वक इसकी आस्था करो, इसका भान करो तथा

संकल्प करो कि "मैं स्वयं साहस ही हूँ। मैं साहस क
ही प्रतिरूप हूं।" भय अदृश्य हो जायेगा।

७३. अनासक्ति का अभ्यास धीरे-धीरे होता है। इससे स्वतन्त्रता एवं शान्ति की नवीन अनुभूति होती है।

७४. क्रोध निकृष्ट अग्नि है। काम सर्वनाशी अग्नि है। इन दोनों से तुम्हारा हृदय झुलस जाता है। प्रेम तथा सात्विकता के द्वारा इनकी अग्नि को बुझा डालो।

७५. ध्यान करो कि "मैं निर्भय अमर आत्मा हूँ।" भय का लोप हो जायेगा।

७६. सच्चा प्रेम इस पृथ्वी पर की सबसे बड़ी शक्ति है बिना बन्धन के ही यह बांधता है तथा बिना तलवार के ही यह शासन करता है।

७७. प्रेम को अपना कवच बना लो।

७८. ईश्वर से प्रेम करना सब से प्रेम करना है। सब से प्रेम करना ईश्वर से ही प्रेम करना है।

७९. प्रेम को अपना खजाना बनाओ। प्रेम के संदेश का प्रचार करो।

८०. सभी ईश्वर के ही प्रतिरूप हैं। सबों के प्रति समान रूप से प्रेम करो। बारम्बार प्रयास करो।

८१. विश्व-व्यापी प्रेम का अभ्यास करो। सबों से प्रेम करो। सबों को हृदय से लगाओ। सबों के प्रति दयालु बनो। इससे घृणा, द्वेष आदि नष्ट हो जायेंगे।

८२. सर्वों से प्रेम करो। यही आत्म-साक्षात्कार अथवा मुक्ति का रहस्य है।

८३. समत्व, दयार्द्र वचन, साहस, शुद्ध आचरण, धैर्य्य—ये चारों मौलिकगुण हैं।

८४. न्याय, समाधान, साहस, ज्ञान तथा पवित्रता ये पांच महान् सद्गुण हैं।

८५. सद्गुण सबसे बहुमूल्य खजाना है। इस खजाने की अधिकाधिक रूप में वृद्धि करो।

८६. सद्गुण वह स्वर्णिम कुञ्जी है, जिससे आनन्द का द्वार उन्मुक्त होता है।

८७. साहस, उदारता तथा सात्विकता-ये तीन महान् सद्-गुण हैं।

८८. सात्विकता, साहस, नम्रता, आत्म नियन्त्रण, अहिंसा, सत्य, श्रद्धा, दया आदि दिव्य गुणों का अर्जन करो।

८९. धार्मिक बनो। तुम ज्ञान के रास्ते में हो।

९०. अपने हृदय में प्रेम, सात्विकता, साहस, नम्रता तथा करुणा के पौधों का आरोपण करो।

संसार में तुम्हारा स्थान

संसार में तुम्हारा स्थान

——❀:०:❀——

(क) *किस प्रकार जीवन-यापन किया जाय?*

(ख) *प्रकाश-पथ*

(ग) *अनन्त के सुर में*

(घ) *जीवन-पाठ*

——❀:०:❀——

(क) जीवन यापन की कला

१. इस संसार में रहो परन्तु सांसारिक मत बनो।

२. भगवान को अपने हृदय रूपी सिंहासन पर आसीन करो। आन्तरिक संग्राम में महान् योद्धा बनो। अपने लक्ष्य को दृष्टिगत रखो! सत्य का प्रचार करो।

३. अपने बच्चों को इस प्रकार की शिक्षा दो कि वे अपने को इस संसार के भावी नागरिक समझें।

४. आय के अन्तर्गत ही अपना व्यय रखो। युवावस्था में बचाकर रक्खो। वृद्धावस्था में उसका व्यय करो। कभी भी कर्ज न करो।

५. ईश्वर ही आन्तरिक शासक है। ईश्वर में अपनी जड़ जमाओ।

६. अमरत्व तुम्हारा जन्म-सिद्ध अधिकार है। इसका यहीं पर साक्षात्कार करो।

७. विस्तृत होओ। उन्नति करो। आगे बढ़ो।

८. अपने लक्ष्य को मत भूलो। जागो। लक्ष्य की प्राप्ति करो।

९. मन का नियन्त्रण करो। मन को सन्तुलित रखो। मन पर दबाव डालो। मन को अनुशासित करो। मन को सतत तल्लीन रखो।

१०. 'मैं कौन हूँ' की जिज्ञासा करो। खोजो, समझो और साक्षात्कार करो।

११. केवल आत्मा ही है। सबों के साथ एकात्मता का मान करो।

१२. सहनशील बनो। सभी प्रकार के विश्वास, सम्प्रदाय तथा धर्मों में एकता के दर्शन करो।

१३. सबों के विचार, सम्मति एवं भावनाओं का आदर करो।

१४. प्रत्येक वस्तु में कुछ न कुछ सत्य है।

१५. विचार तथा सम्मतियों के विभिन्न पहलू हैं। दूसरों से झगड़ा न करो।

१६. उस ज्योति का दर्शन करो, जिससे सभी चीजें ज्योतित हो रही हैं।

१७. दिव्य जीवन के लिए प्रयास करो। तुम चिरन्तन शान्ति एवं अमरत्व की प्राप्ति करोगे।

१८. हस्तगत कार्यों में ही अपना पूर्ण ध्यान एकाग्र करो। बीता हुआ कल महान् अतीत से जा मिला है। वह समाप्त हो चुका है। उसके प्रति ध्यान देने की कोई आवश्यकता

नहीं। आने वाला कल भी अभी बहुत दूर है। वह अपने साथ कार्यों के सम्पादन के लिए काफी समय भी लावेगा। अतीत को भूल जाओ, भविष्य पर ध्यान न दो। वर्त्तमान में रहो। भविष्य अपनी चिन्ता आप कर लेगा।

(ख) प्रकाश–पथ

१९. दिव्य ज्योति की किरण! धार्मिकता एवं सत्य-पथ के पथिक बनो। यही प्रेम का पथ है। यही प्रकाश-पथ है।

२०. इस विश्व के महान् रक्षकों एवं सन्तों के पदचिह्नों का अनुगमन करो।

२१. साधु-सन्तों से अपना सम्बन्ध स्थापित करो और सात्विकता तथा ज्ञान की वृद्धि करो।

२२. ईश-दर्शन के पिपासु बनो। वास्तविक आध्यात्मिक क्षुधा को प्राप्त करो।

२३. अपने दोषों एवं कमजोरियों को स्वीकार करो। तभी तुम उन्नति करोगे।

२४. आत्म-श्लाघा की भावना का नाश करो। तभी तुम अपने अहङ्कार का दमन करोगे।

२५. सरल जीवन व्यतीत करो। नियमित जीवन-यापन करो।

२६. अपने सिद्धान्तों के पक्के बनो। सुदृढ़ बनो।

२७. अभ्यन्तर से शक्ति तथा बल को प्राप्त करो। आत्मा अनन्त शक्ति तथा बल का स्रोत है।

२८. अज्ञानता, कामनायें तथा स्वार्थयुक्त कर्म ये सब बन्धन हैं जो तुम्हें बांधते हैं। इन बेड़ियों को तोड़ डालो और स्वतन्त्र हो जाओ।

२६. आध्यात्मिक साधना ही तुम्हें दिव्य बना सकती है।

३०. ईश्वरीय भाषा में अपने को शिक्षित करो। मौन ही उसकी भाषा है।

३१. ध्यान और सन्तोष ये ही सुन्दर स्वास्थ्य एवं दीर्घायु प्राप्त करने के रहस्य हैं।

३२. अन्तर्दर्शी बनो। अपने हृदय के भीतर उसकी खोज करो।

३३. भीतर की ओर देखो। भीतर की ओर टकटकी लगाओ।

३४. आत्म-ज्ञान की प्राप्ति करो। ज्ञान से स्वतन्त्रता की प्राप्ति होती है। ज्ञान अविद्या का संहारक है।

३५. ब्रह्ममुहुर्त्त में ध्यान करो। नियमित ध्यान का अभ्यास करो।

३६. आत्मा ओज से शक्ति, बल तथा ज्ञान की प्राप्ति करो।

३७ ध्यान अमरानन्द की ओर प्रवृत्त करता है। अतः ध्यान करो।

३८. शिशुवत् स्पष्टवादी बनो; तुम अमरानन्द के लोक में प्रवेश करोगे।

३९. नम्र बनो। सरल बनो। भद्र बनो। मधुर बनो।

४०. बद्ध-परिकर हो जाओ। उठो और कार्यरत होओ। तुम हर क्षेत्र में सफल होओगे।

(ग) अनन्तता की सुर में

४१. इन्द्रियों को समेट लो। ध्यान करो। उस अनन्त के सुर में मग्न रहो।

४२. ध्यान करो। अमरानन्द का आस्वादन करो। अनन्त आनन्द का साक्षात्कार करो।

४३. शान्त हो जाओ। शान्त में सत्य प्रतिभासित होगा।

४४. अन्तर्दर्शी बनो। शान्त बनो। ईश्वरीय आन्तरिक वाणी का श्रवण करो।

४५. ऐसा भान करो कि तुम सर्वव्यापी आत्मा हो। आत्मा में ही रहो। आत्मा में ही आनन्द प्राप्त करो।

४६. शुद्ध प्रेम का विकास करो। विस्तृत दृष्टिकोण रखो।

४७. सब से प्रेम करो। सब की सेवा करो। सब में दर्शन करो।

४८. दृश्य-जगत में ब्रह्म अथवा सत्य ही है।

४९. जब तक तुम अहङ्कार एवं ममत्व का त्याग नहीं करते तब तक ईश्वरीय प्रेम का भान करना दुर्लभ है।

५०. जब तुम ईश्वर से प्रेम करते हो तो तुम प्रत्येक वस्तु से प्रेम करते हो सभी उसी के प्रतिरूप हैं।

५१. जब तुम ईश्वर से प्रेम करते हो तो सारा संसार ही तुम्हारा प्रिय बन जाता है।

५२. सभी प्राणियों की सेवा में जीवन-यापन करना जीवन का सर्वोत्तम उपयोग है।

५३. प्रेम को पुरस्कार की आवश्यकता नहीं। प्रेम में भय का समावेश नहीं।

५४. तुम स्थान-परिच्छेद में सीमित नहीं। तुम सर्वव्यापक आत्मा हो।

५५. अपने मन को दिव्य विचारों से संतृप्त करो।

५६. इस विश्व में ईश्वर की ही सत्ता है।

५७. सीमित वस्तुओं में सुख नहीं। केवल असीम में ही आनन्द है।

५८. असीम के सुर में जीवन-यापन करो। अपने स्वरूप में आनन्द प्राप्त करो। यही जिन्दगी का महत्वपूर्ण नारा है।

(घ) जीवन-पाठ

५९. जीवन बहुत मूल्यवान है।

६०. यह संसार तुम्हारा शरीर है। यह संसार महान पाठशाला है। यह संसार तुम्हारा शान्त शिक्षक है।

६१. वर्त्तमान में रहो, अतीत को भूल जाओ। भविष्य की आशाओं का त्याग करो।

६२. अच्छी तरह विचार करो। अच्छी तरह काम करो। विवेक सीखो।

६३. आध्यात्मिक धन की प्राप्ति करो। आध्यात्मिक धन बहुमूल्य तथा अक्षय है।

६४. ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति करने पर तुम्हें सभी चीजें मालूम हो जायेंगी।

६५. यह जान जाओ कि प्रकृति अथवा प्रधान भ्रमात्मक है।

६६. तुम अपने दुःख और चिंताओं का संसार स्वयं रचते हो। कोई दूसरा तुम्हें इसके लिए बाध्य नहीं करता।

६७. ऐसा भान करो कि अपने पारिवारिक व्यक्तियों में तुम सिर्फ भगवान की ही सेवा कर रहे हो।

६८. शरीर आत्मा के साथ अनवरत युद्ध करता रहता है। अतः सदा सतर्क रहो।

६९. अपनी पत्नी, सम्पत्ति अथवा अपने पुत्र के प्रति प्रेम का एकीकरण करो और उसे ईश्वर की ओर निर्दिष्ट करो। तुम इसी क्षण साक्षात्कार करोगे।

७०. यह सांसारिक जीवन कितना खोखला है! इन्द्रियों पर विश्वास न करो।

७१. प्रेम उस महान् नियम का पालन स्वरूप है।

७२. उस नियम को समझो और शक्ति तथा ज्ञान की प्राप्ति करो।

७३. सांसारिक पदार्थों के प्रति कामना का विनाश ही आध्यात्मिकता का आवश्यक प्रतिबन्ध है।

७४ शान्ति को प्राप्त करना कठिन है।

७५. अपनी हृदय-भूमि को उपयुक्त बनाओ। गुरु तुम्हारे सम्मुख प्रगट होकर उसमें आध्यात्मिक बीजारोपण करेगा।

७६. तुम्हारे भीतर की पाशविक वृत्ति दिव्य जीवन की शत्रु है। इस निम्न प्रकृति को जलाकर भस्म कर डालो।

७७. सभी प्रकार के कष्टों को सहन करो। सभी प्रकार की बाधाओं का सामना करो। बहादुर और निर्भय बनो। अब तुम अमरत्व-प्राप्ति के लिए उपयुक्त हो।

७८. प्रत्येक दिन को उसी प्रकार समझो, मानो वह तुम्हारा अन्तिम दिन हो। प्रत्येक क्षण को प्रार्थना, ध्यान तथा सेवा कार्य्य में व्यतीत करो।

७९. सदा प्रस्तुत रहो। उसी प्रकार रहो मानो तुम्हारी मृत्यु सन्निकट है।

८०. आत्मसंयम, सात्विकता, भक्ति, मुमुक्षत्व, निदिध्यासन एवं ध्यान ये ही इस अनन्त संसार से छुटकारा पाने के उपाय हैं।

८१. इस जीवन में एक ही वस्तु प्राप्त करने योग्य है और वह है ईश्वर।

८२. केवल ईश्वर का ही अस्तित्व है। अन्य सभी चीजें रिक्त हैं।

८३. संन्यास में ही आनन्द, बल, शान्ति, शक्ति, प्रकाश एवं ज्ञान की प्राप्ति करो।

८४. वास्तविक महान् पुरुष की प्रारम्भिक जांच उसकी नम्रता, सरलता, प्रेम तथा दयालुता द्वारा की जाती है।

८५. यदि कोई व्यक्ति तुम्हें कष्ट पहुँचावे तो उसे क्षमा कर दो और उसके द्वारा पहुँचाये गये कष्ट को भूल जाओ। तुम आध्यात्मिक-शक्ति का संचय करोगे।

८६. विषय-सुख मृगतृष्णामात्र है। इसमें वास्तविकता नहीं। यह सदा प्रतिक्रिया एवं दुःख का शिकार बना रहता है।

८७ शुद्ध प्रेम स्वर्गिक है। यह ईश्वरीय है। इसको किसी का भय नहीं। इस की कोई सीमा नहीं। यह सर्वत्र है।

८८. अविद्या बन्धन का कारण है। ज्ञान के द्वारा इसका विनाश होता है।

८९. अपने विचारों में उदार तथा सामान्य बनो। विस्तृत होओ। उन्नति करो। बढ़ो। सबों से ऐक्य स्थापित करो। तिल का ताड़ न करो।

९०. सिंह के गर्जन में, चिड़ियों के संगीत में, बालकों के रुदन में ईश्वर ही है। सर्वत्र उसी की स्थिति का भान करो।

९१. त्याग और सेवा ये तुम्हारे दो हाथ हैं। स्वतन्त्रता तथा शान्त तुम्हारे दोनों पैर हैं। प्रेम एवं आनन्द ये तुम्हारी आखें हैं। सत्य एवं भक्ति ये दोनों कान हैं। आत्मज्ञान तुम्हारा मुंह है। पूर्णता ही वास्तव में तुम्हारा हृदय एवं आत्मा है।

९२. प्रेम और सेवा के बिना हृदय ऊजाड़ बना रहेगा।

९३. स्वार्थपरता जिन्दगी का काँटा है।

९४. हृदय की शुद्धता ही ईश्वर की प्राथमिक मांग है।

९५. ऐ मनुष्य ! साधु-सन्तों की वाणी को सुनो और ज्ञान-प्राप्त करो। इस बहुमूल्य जीवन का अपव्यय न करो।

९६. अपने हृदय-पत्र पर इन शब्दों को लिख लो "सेवा करो प्रेम करो, साक्षात्कार करो, अच्छे बनो, सुकार्य्य करो दयालु बनो, कारुणिक बनो, मैं कौन हूँ की जिज्ञासा करो आत्मा को जानो और मुक्त हो जाओ। योग्य बनो योग्यता लाओ, पात्रत्व प्राप्त करो" *तुम आत्म-संगीत श्रवण करोगे और आनन्द एवं शान्ति के सागर में निमग्न हो जाओगे।*

९७. अपनी जिह्वा एवं इन्द्रियों को संतुष्टि प्रदान करने के लिये मत जीवो, परन्तु आभ्यन्तरिक स्वरूप के साक्षात्कारार्थ ही जीवन-निर्वाह करो।

९८. सहनशीलता की शक्ति का विस्तार करो। कठिन जीवन व्यतीत करो।

९९. सदाचारी बनो। सद्गुणों की वृद्धि करो।

१००. अच्छी आदतों की संस्थापना करो। बुरी आदतों को निकाल फैंको।

१०१. नपे-तुले शब्दों को बोलो। जिह्वा सम्बन्धी गाड़ी पर नियन्त्रण डालो

१०२. कुत्ता, हाथी, गाय, चींटी, चांडाल, दुष्ट जन एवं सभी नाम-रूपों में एक ही आत्मा का दर्शन करना ज्ञान कहलाता है।

१०३. शरीरगत आसक्ति बहुत भयावनी है। वैराग्य, विवेक एवं चिन्तन के द्वारा इस आसक्ति को दूर करो।

१०४. तुम प्रखर विद्वान बन सकते हो और फिर भी धार्मिक जीवन तथा धर्म से बहुत दूर ही हो।

१०५. आज जो तुम्हें बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है उनमें बहुतों को हल करने के लिए तुम्हें नव आध्यात्मिक जीवन को प्राप्त करना चाहिये।

१०६. नैतिकता सब से श्रेष्ठ है।

१०७. जन-सेवा-कार्यों में हम वास्तविक धार्मिक मनुष्यों की आवश्यकता समझते हैं।

१०८. सरल एवं आडम्बरहीन जीवन व्यतीत करो।

१०९. भोजन करने के लिये न जीओ, परन्तु जीने के लिए ही भोजन करो।

११०. बुरे मनुष्यों के प्रति एक अच्छे शब्द को कहने में कुछ खर्च नहीं पड़ता, परन्तु यह बहुमूल्य होता है।

१११. द्वेष न करो। निन्दा न करो। झूठ न बोलो। दग़ा न दो। डाह न रखो। तुम सदा आनन्दित, प्रसन्न एवं शान्त रहोगे।

११२. अतीत की गलतियों को भूल जाओ। सदाचारी बनो और अभी से अपना सुधार करो।

११३. दयालुता दान में निहित नहीं, यह भद्रता एवं उदारता में पाई जाती है।

११४. जीवन का माधुर्य्य भक्ति है। जीवन की सुगन्धि उदारता है। ध्यान ही जीवन का आधार-दण्ड है। जीवन का लक्ष्य आत्म साक्षात्कार है।

११५. अतः सेवा करो। प्रेम करो। शुद्ध बनो। उदार बनो। ध्यान करो और साक्षात्कार करो।

११६. ऐ राम! तुम कर्म के नियमों का उल्लंघन नहीं कर सकते। केवल आत्मज्ञान ही कर्मों को भस्मीभूत कर सकता है। गत कार्यों के अनुसार तुम्हारा कर्म तुम्हें दुःख एवं सुख प्रदान करेगा। ऐसा भान करो कि "यह भी विनष्ट हो जायगा" सुख एवं दुःख सब में अपने मन को सन्तुलित रखो। नित्य आनन्द-स्वरूप में आश्रय ग्रहण करो, जो कर्म की गति से परे है। आत्मज्ञान की अग्नि से कर्म को भस्मीभूत करो।

११७. इस जीवन का एकमात्र उद्देश्य आत्म-साक्षात्कार की प्राप्ति करना है।

११८. इस महान पद की प्राप्ति में ही अपने जीवन का प्रत्येक क्षण व्यतीत करो।

ॐ शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!

दिव्य जीवन संघ

हिमालय पर्वत की तलहटी में, गंगा के तट पर ऋषिकेश के निकट शिवानन्दनगर में इस संघ का केन्द्रीय कार्यालय है। यहां संन्यासियों का एक बहुत बड़ा समूह है, जिसने अपना जीवन मानवता की नैतिक तथा आध्यात्मिक सेवा के लिए अर्पित कर दिया है। ये संन्यासीगण निष्काम कर्मयोग, भक्ति, उपासना, ध्यान तथा ईश्वर-साक्षात्कार का शिक्षण ले रहे हैं और उन्हें अपने जीवन में व्यवहृत करने का प्रयत्न करते हैं। यह संघ सारी मानव-जाति को जीवन के सही और उन्नत ध्येय के प्रति जागरूक बनाने तथा उस ध्येय को प्राप्त करने के सभी साधनों पर प्रकाश डालने की दिशा में प्रयत्नशील है।

दिव्य जीवन संघ अध्यात्म को विश्व भर में फैलाने के अपने उद्देश्य के लिए पुस्तक-पुस्तिकाओं का प्रकाशन करता है जिनमें योग वेदान्त, धर्म, दर्शन, प्राचीन वैधक शास्त्र सम्बन्धी विचार होते हैं। यह धार्मिक सम्मेलनों और शिविरों का आयोजन तथा प्रबन्ध भी करता है और विश्व में नैतिक एवं आध्यात्मिक पुनर्जीवन लाने की दृष्टि से योग के व्यावहारिक प्रयोग के शिक्षण-सत्र भी चलाता है।

उपचार तथा सामान्य रोगियों को दवा देने का काम निःशुल्क किया जाता है। आयुर्वेदिक फार्मेसी में आयुर्वेदिक औषधियों का निर्माण होता है। ये औषधियां अति उत्तम तथा विश्वसनीय हैं। इससे वे न केवल भारत में वरन् विदेशों में भी बहुत ही ख्याति प्राप्त कर चुकी हैं। गरीब जनता तथा योग के विद्यार्थियों में प्रति-वर्ष ये आयुर्वेदिक औषधियां विना मूल्य के बांटी जाती हैं। एक नेत्र-चिकित्सालय भी यहां पर है जिसमें सुधरे हुए आधुनिक साधन पर्याप्त मात्रा में हैं। इसका लाभ आस-पास के पहाड़ी इलाके के असंख्य लोगों को मिल रहा है। उपचार के लिए रोगियों के रहने की भी व्यवस्था यहाँ है। इन दोनों अस्पताल के रोगियों को भोजन और दवा मुफ्त दी जाती है। एक भव्य मन्दिर तथा भजनहाल भी है जो आध्यात्मिक साधन तथा प्रार्थना के लिए अनुकूल आदर्श सुविधाओं से सम्पन्न है।

संघ निम्नलिखित सेवायें प्रस्तुत करता है—(१) वार्षिक सदस्यता, (२) व्यक्तिगत सुझाव तथा मार्ग दर्शन के लिए पत्र-व्यवहार, (३) योग और वेदान्त सम्बन्धी व्यावहारिक ग्रन्थों का प्रकाशन, (४) मासिक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन और (५) विशेष प्रचार तथा प्रेरणा प्रदान करने की दृष्टि से पुस्तकों का निःशुल्क वितरण।

प्रवृत्तियों का प्रबन्ध

संघ को इस अबाध सेवा-कार्य में सदा ही सेवाभावी भक्त और प्रेमी जनों का सहयोग प्राप्त होता रहा है।

शिवानन्द साहित्य के अनमोल ग्रन्थ

धना— मूल्य: रु० १२.००

आध्यात्म-साधना के समग्र स्वरूपों का विस्तृत विश्लेषण न केवल संन्यासियों के लिए, अपितु गृहस्थों के लिए भी योगी है।

वन में सफलता के रहस्य— मूल्य: रु० ६.००

जीवन में सफलता के सांगोपांग, सरल और अनुभूत धनों का सुन्दर, सरस और व्यावहारिक प्रतिपादन।

र्मयोग–साधना— मूल्य: रु० ५.००

मनुष्य मात्र के लिए सहज तथा अनिवार्य कर्ममय जीवन को गी बनाने की विद्या का शास्त्रीय और व्यावहारिक प्रतिपादन।

द्यार्थी जीवन में सफलता— मूल्य: रु० ३.००

छात्रावस्था में ही आध्यात्म जीवन की साधना तथा चारित्र्य निर्माण की कला का उपदेशात्मक प्रवचन।